भट्ट
निबन्ध
माला
(60) 12.2

आतंकवादियों की हिंसा से जान बचाकर भागे करीब दो दर्जन परिवारों के अनुसार पाक की सीमा के नजदीक के जिलों में आतंकवादियों ने तो समानान्तर सरकार ही बना ली है और गांवों में तो उन्हीं का राज चल रहा है। ये आतंकवादी गैर सिखों को मार-मार कर भगा

रत्नागिरी के लिए रवाना
सांताक्रुज हवाई अड्डे पर
बातचीत कर रहे थे।
महाराष्ट्र में उनकी पार्टी
मिलेगा। साथ ही उन्होंने
किया कि सभी राज्यों में उ

...लगभग आठ लाख रुपये का ...या गया। उन्होंने श्री राजीव गांधी ...ल लगाये आरोपों को बेबुनियादी ... और कहा कि चन्दा देने वालों ...ों के साथ कोई छल नहीं किया गया

(शेष पृष्ठ १० पर)

## ... में घायल

...द्रमुक के शीर्षस्थ नेता के.ए. ...सामी, के. राजाराम, एस. ...वुक्कारसू और सैकड़ों पार्टी कार्यकर्त्ता ...स्पताल पर पहुंचे जहां जयललिता ...हैं।

...ना के सम्बन्ध में एक बयान देते हुए ...यललिता ने यहा आरोप लगाया कि ...या के लिये नियोजित प्रयास किया गया

...ने कहा कि इस प्रयास के पीछे जो ...दे उनकी जानकारी शीघ्र हो जायेगी। ...नाये रखने की पार्टी कार्यकर्ताओं से ...करते हुए उन्होंने कहा कि वे शीघ्र ही ...मलेंगी।

...ने कहा कि भगवान की कृपा, स्वर्गीय ... रामचन्द्रन के आशीर्वाद तथा पार्टी ...ओं और तमिलनाडु की जनता की ...ना के कारण ही वे बच पायीं।

...बला

ी मंजू प्रकाश और
दिनेश कुमार सिंह के
थियों का वोट बंटना
वर्तमान सांसद तेज
का समर्थन मिलने के
स्थिति बेहतर बनायी
उम्मीदवार श्रीमती
० पर)

जिसका दाम देखकर आपके चेहरे पर
आए एक नई रौनक!
**बजट**
वॉशिंग पावडर




मार घरा के ... नहीं निकलते एवं स्वयं
कश्मीर लिबरेशन फ्रंट के उग्रवादी हिन्दुओं
की दुकानों का लूटते हैं और पैसा न देने पर
जान से मार देने की धमकी देते हैं। एक डाक्टर
ने बताया कि आतंकवादियों ने उनके दवाखाने
जबरन बंद करवा दिये। सुबह होते ही
'भारतीय कुत्तों वापस जाओ' के नारे लगाये
जाते हैं।

... लोकसभा चुनाव में सिमरन सिंह

## साम्प्र...
## सत्ता ...

..., २४ फरव...
अध्यक्ष एवं पूर्व प्रधान
कहा है कि कांग्रेस (इ) ...

...शि
...ले

...ली में दिये गये इस बयान
...ताया कि परिषद ने मंदिर

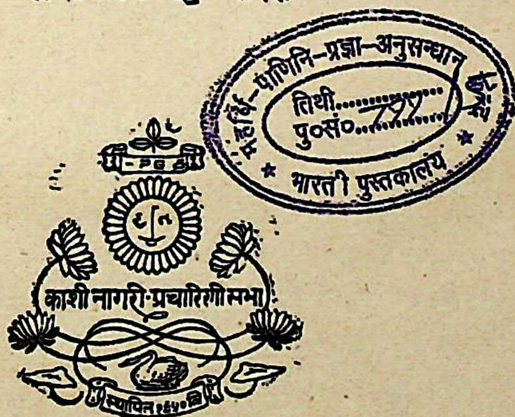
प्रकीर्णक पुस्तक-माला

# भट्ट-निबंधमाला

## पहला भाग

स्वर्गीय पंडित बालकृष्ण जी भट्ट के
सुंदर निबंधों का संग्रह

संपादक
श्री धनंजय भट्ट 'सरल'




सं० २००४ वि०
नागरीप्रचारिणी सभा काशी

मुद्रक : पं० रामभरोस मालवीय, अभ्युदय प्रेस, प्रयाग ।
प्रकाशक : नागरीप्रचारिणी सभा, काशी ।

प्रथम संस्करण ] २००४ वि० [ मूल्य १।)





# वक्तव्य

निबंध साहित्य का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। पर निबंध लिखने पर हिंदी में बहुत कम ध्यान दिया गया है। आज हिंदी की सर्वतोमुखी उन्नति के समय में उपन्यास-साहित्य बहुत आगे बढ़ चुका है। प्रसाद, लक्ष्मीनारायण मिश्र, गोविन्ददास जैसे लेखक अच्छे से अच्छे नाटक लिख चुके हैं। हरिऔध, मैथिलीशरण गुप्त, पंत, प्रसाद, महादेवी वर्मा, और आचार्य रामचंद्र शुक्ल की कृतियाँ काव्य और आलोचना साहित्य की उन्नति की द्योतक हैं। परंतु निबंध साहित्य में महावीरप्रसाद द्विवेदी के कुछ निबंधों को छोड़कर अच्छे निबंधों का अभाव ही सा है।

हिंदी में निबंध का लिखा जाना भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र के समय से शुरू हुआ और इसका श्रीगणेश स्वर्गीय पं० बाल-कृष्ण भट्ट ने किया। भट्ट जी ने भावात्मक और विचारात्मक दोनों तरह के निबंधों का सृजन किया है। हिंदी-गद्य में पद्यात्मक ढंग से लिखना आज नई बात समझी जाती है। भट्टजी ने इस तरह के गद्य-काव्य का सबसे पहले आविर्भाव किया था। भट्टजी हिंदी के सबसे पहले निबंध-लेखक हैं फिर भी उनके निबंधों में रचना का प्रारंभिक स्वरूप न मिलकर उसका सुसंस्कृत रूप मिलता है। उनका हर निबंध भाषा की सजीवता, रोचकता, और स्थान-स्थान पर सुंदर मुहावरों की लड़ी से गुथा हुआ एक सुंदर गुलदस्ता मालूम होता है। उनका एक-एक निबंध साहित्यिक सौरभ से युक्त है। उनके निबंध के एक-एक शब्द में जो रस है, मौलिकता है, अनूठापन है, वह

अन्यत्र कहीं मिलना कठिन है। इन्हीं सब गुणों से भट्ट जी हिंदी साहित्य के एडीसन माने जाते हैं।

भट्टजी ने छोटे बड़े सभी मिला कर एक हजार से ऊपर निबंध लिखे हैं। इस तरह उन्होंने हिंदी में निबंध साहित्य की कमी को पूरा करने में पर्याप्त परिश्रम किया है। उनके प्रायः सभी निबंध ३३ साल तक लगातार निकलने वाली 'हिंदी प्रदीप' के हर अंक में स्थान-स्थान पर जगमगा रहे हैं। ये निबंध अभी तक पुस्तकाकार नहीं छपे हैं और 'हिंदी-प्रदीप' की प्रतियाँ भी अप्राप्य हो गई हैं। अब उनके निबंध को पुस्तक रूप में संकलित करने का प्रयत्न किया गया है। उनके कुछ निबंधों का संग्रह "भट्ट निबंधावली" के नाम से दो भागों में हिंदी साहित्य संमेलन से प्रकाशित हुआ है। इसके पहले उनके निबंधों का एक संग्रह, 'साहित्य-सुमन' भी प्रकाशित हो चुका है। 'साहित्य-सुमन' इतने अधिक स्थानों में पाठ्य-पुस्तक स्वीकृत हुआ और उसके इतने अधिक संस्करण निकले जितने इस प्रकार के किसी दूसरे संग्रह के शायद ही हुए हों। अब भट्ट जी के कुछ भावात्मक निबंधों का यह चौथा संग्रह 'भट्ट-निबंध-माला' के नाम से प्रकाशित किया जाता है। इसमें कुल ३२ निबंध उच्चकोटि के संग्रह किए गए हैं। प्रत्येक निबंध के नीचे उसकी रचना का समय भी दे दिया गया है।

आशा है हिंदी-संसार इस संग्रह का भी उसी तरह स्वागत करेगा।

अहियापुर प्रयाग<br>
ता० ३१ अगस्त १९४७ } धनंजय भट्ट 'सरल'



# जीवनी

स्वर्गीय पं० बालकृष्ण भट्ट खड़ी बोली हिन्दी के जन्म-दाताओं में हैं। भट्ट जी भारतेन्दु बाबू हरिश्चंद्र के समकालीन थे और उन इने-गिने साहित्यकारों में थे जिन्होंने हिन्दी की सेवा में अपना सब कुछ समर्पित कर दिया।

पंडित बालकृष्ण भट्ट का जन्म ३ जून सन् १८४४ ई० को प्रयाग के एक प्रतिष्ठित मालवीय घराने में हुआ था। वह संस्कृत के बहुत बड़े विद्वान थे फिर भी मातृभाषा हिन्दी की ओर उनका अनन्य प्रेम था।

सन् १८७० ई० के लगभग भट्ट जी ने हिन्दी में लिखना शुरू किया। उन दिनों भारतेन्दु बाबू हरिश्चंद्र की बड़ी धूम थी। भट्ट जी ने जो पहला लेख लिखा उसका शीर्षक 'कलिराज की सभा' था। उसे उन्होंने भारतेन्दु जी के 'कविवचन-सुधा' में छपने के लिए भेजा। भारतेन्दु जी ने उसे बहुत ही पसंद किया। इसके बाद 'रेल का विकट खेल', 'स्वर्ग में सबजेक्ट कमेटी' इत्यादि उनके कई लेख 'कविवचन सुधा' में निकले। उन सभी लेखों की खूब प्रशंसा हुई। इसके बाद उनके लेख 'काशी-पत्रिका', 'बिहार-बन्धु' आदि में भी निकलने लगे।

सन् १८७७ ई० में उन्होंने हिन्दी की उन्नति के लिए प्रयाग में 'हिन्दी-प्रवर्द्धनी' नाम की सभा स्थापित की। सितंबर १८७७ ई० से उन्होंने 'हिन्दी-प्रदीप' नामक मासिक पत्र निकालना

शुरू किया। 'हिन्दी-प्रदीप' का मोटो यह था जिसे भारतेन्दु जी ने लिखा था :—

शुभ सरस देश सनेह पूरित प्रगट ह्वै आनँद भरै।
बचि दुसह दुरजन वायु सों मणिदीप सम थिर नहिं टरै॥
सूझै विवेक विचार उन्नति, कुमति सब यामें जरै।
'हिन्दी-प्रदीप' प्रकाशि मूरखतादि भारत तम हरै॥

इस 'प्रदीप' में प्राचीन कवियों के जीवनचरित, श्रीमद्भागवत, बाराही-संहिता, गीता और सप्तशती आदि प्राचीन पुस्तकों की समालोचनायें, प्राचीन देश, नगर, नदी, पर्वत आदि का खोजपूर्ण वर्णन और नाटक, उपन्यास, निबंध आदि अनेक उपयोगी विषयों पर लेख लिख-लिखकर उन्होंने खूब छापे।

'हिन्दी-प्रदीप' के अधिकांश लेख भट्ट जी के ही होते थे। 'हिन्दी-प्रदीप' शुद्ध हिन्दी की ज्योति से सदा जगमगाता रहता था। अन्य भाषाओं के उच्छिष्ट लेखों की सहायता से उसमें कभी कोई लेख नहीं छपा। 'हिन्दी-प्रदीप' की भाषा भट्ट जी की अपनी भाषा रहा करती थी। उनकी भाषा की व्यङ्गमयी छटा उन्हीं की अपनी प्रवृत्ति और सम्पत्ति थी। जब कि एक ओर उनकी भाषा में संस्कृत और ब्रजभाषा के सुन्दर से सुन्दर शब्द, वाक्य और मुहावरे भरे रहते थे। दूसरी तरफ उन्हें उर्दू, फारसी या अंग्रेजी तक के खपते और फबते हुए लम्बे से लम्बे टुकड़ों से भी परहेज न था। मालूम होता है उनकी कसौटी केवल एक पारखी जड़िये की सी कसौटी थी या एक चतुर पाकशास्त्र विशेषज्ञ की सी जिसके कारण जितना 'रस' साहित्यिकों को आज तक भट्ट जी की भाषा में मिलता है उतना उसके बाद के किसी लेखक की भाषा में मिलना कठिन है।

जिस तरह भट्ट जी की भाषा उन्हीं की अपनी भाषा थी। उसी तरह उनके लेख भी हमेशा नए से नए उन्हीं के विचारों की उपज रहते थे; किसी की छाया या अनुवाद नहीं। वह जो कुछ लिखते थे अपने दिमाग़ से लिखते थे। यहीं उनके लिखने की खूबी थी। इसी का आदर्श उन्होंने दूसरों के सामने रखा। विचार स्वातंत्र्य की उनके लेखों में यह हालत थी कि जिस अनुपम निर्भीकता से उस जमाने में अंगरेजी सरकार के कार्यों की आलोचना करते थे उसी निर्भीकता से धार्मिक रूढ़ियों और सामाजिक कुरीतियों का खण्डन करते थे।

वह अपनी समझ के अनुसार जो उचित और न्याय समझते थे वही लिखते थे। कभी किसी मत, संप्रदाय या पार्टी के कायल न होते थे। जिस बात से देश और जाति की उन्नति होने की बात देखते वही उनका मत हो जाता और उसी को धर्म कहते थे। यह बात उनके 'हिन्दी प्रदीप' के एक एक लेख में पाई जाती है।

'हिन्दी प्रदीप' के उद्देश के सम्बन्ध में पण्डित श्रीधर पाठक ने यह पद्य लिखा था जो पचास बरस का पुराना है:—

'श्री हरिपद रज कृपा देश दुर्दशा सुधारन
हिंदू-गन मन गुहा महातम तोम निवारन
दीप देश नव नेह नेह भरि भरि तहँ बारन
प्रज्वलित उर्दू-मुख कवलित हिन्दी उद्धारन
दीन प्रजा दुख हरन नागरी बरन प्रचारन
पर पद गत आरत भारत की आपद टारन
काव्य कला कौशल्य शिल्प विद्यादि उबारन
उत् तम उत्तम विषय देश भाषा संचारन

देश काल नियमानुसार मारग पग धारन
शत विधि निज उद्देश शेष लों पूरन कारन।'

'हिंदी-प्रदीप' तैंतीस साल तक लगातार निकलता रहा। अन्त में सन् १६१० ई० में 'हिंदी-प्रदीप' कर्मयोगी प्रेस से प्रकाशित होता था। भट्ट जी के अनन्य भक्त और राजनीति के क्षेत्र में उनके साथ-साथ काम करने वाले कर्मवीर पं० सुंदर लाल जी 'कर्मयोगी' और 'हिंदी प्रदीप' दोनों के मुद्रक और प्रकाशक थे और 'कर्मयोगी के साथ ही साथ भट्टजी के एक निर्भीक लेख पर सरकार के भारी जमानत माँगे जाने के कारण 'हिंदी-प्रदीप' सदा के लिये बंद हो गया।

'हिंदी-प्रदीप' बंद होने के बाद उन्होंने कालाकांकर से निकलने वाले 'सम्राट' नामक साप्ताहिक पत्र का कुछ दिन संपादन किया। फिर बाबू श्यामसुंदरदास जी ने काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित 'हिंदी-शब्दसागर' कोष के संपादन के लिये उन्हें बनारस बुला लिया। साल भर वहाँ काम करने के बाद बाबू श्यामसुन्दर दास जी जिनके संरक्षकता में कोष का काम होता था, जम्बू गये तो उनके साथ इन्हें भी जम्बू जाना पड़ा। वहाँ छः महीने काम करते हुए होंगे कि काठ की सीढ़ी से पैर फिसल जाने पर वे कूले के बल गिरे जिससे उनका कूला उखड़ गया। अशक्त हो जाने पर वे दिसंबर १६१३ ई० में प्रयाग लौट आए और यहीं १६ सितंबर १६१४ ई० को उनका स्वर्गवास हो गया।

भट्ट जी के संबंध मे बहुत सी अनुपम बातें लिखने योग्य हैं। पर यहाँ स्थानाभाव से लिखने में असमर्थ हैं। यदि हिन्दी प्रेमियों की इच्छा हुई तो उनकी एक विस्तृत जीवनी लिख कर उनके सामने उपस्थित की जावेगी। अब पं० श्रीधर पाठक रचित एक छप्पय लिख कर उनकी जीवनी समाप्त की जाती है।

"जीवन तव अति धन्य सबहि विधि अहो पूज्यवर
अनुदिन अनुकरनीय चरित पावन प्रशस्य तर
धनि श्वदेश-सुचि-प्रेम नेम प्रिय प्रानहुँ सों पर
सात्विक शुद्ध विचार सतत भारतोद्धार कर
धनि 'हिन्दी प्रदीप' प्रकाशि जग मूरखता-तम-त्रास हर
तव पुन्य नाम प्रिय भट्ट श्रीबालकृष्ण जग में अमर।"

धनंजय भट्ट 'सरल'

# निबन्ध सूची

# (१) देवताओं से हमारी बातचीत

आज अर्द्धोदय महोदय महापर्व है बड़े से बड़ा कुम्भ आ उपस्थित हुआ है। काश्मीर से कन्याकुमारी तक और कलकत्ता से पेशावर तक के लोग इस माघ मेले में आये हैं। न जाने कहाँ-कहाँ के सन्त, महन्त, साधु, विरक्त, खाकी, वैरागी, नागे, निर्मले स्वर्गद्वार का सीधा रास्ता दिखलाने को यहाँ प्रयाग में आये हुए हैं।

आज श्री गंगा जी में गोता लगाते ही बैकुण्ठ अवश्य मिलेगा इन्हीं सब बातों को सोच-विचार न जाने कहाँ की शामत सवार हुई कि मुझे भी गंगा-स्नान की श्रद्धा चर्राई। कुछ तो शामत हुई कुछ मैंने यह भी सोचा कि आज के दिन थोड़ा सा क्लेश उठाने मात्र ही से जो जन समाज में मैं भी श्रेष्ठ हिन्दू समझा जा सकता हूँ और नास्तिक तथा क्रिस्तान कहलाने से बचता हूँ तो क्यों न उस थोड़े से क्लेश को गँवारा करें। भीतर मेरे चाहे जो हो पर कुटिल कपटी ज़ाहिरादारों में आदर पाने लायक रहूँगा। यही सब सोच समझ चार बजे तड़के ही घर से चल निकला। उधर शीत भी वह सुरखी पकड़े हुई थी कि पग-पग में छठी का दूध याद आता था बूट और मोजा कसे हुये था पर तो भी कदम-कदम पर यही बोध होता था मानो केदारनाथ के हेंवार में गलने को जा रहा हूँ। सर्राटे की हवा कान को बेंधे डालती थी कलेजा काँपता था। खैर, ज्यों त्यों कर गंगा तट पर पहुँचे। उधर सूर्य नारायण का आधा बिम्ब सान पर चढ़े शुद्ध मानिक समान रक्त या यों कहिये रेल की इञ्जिन के आगे वाली लालटेन के माफिक अपनी किरन की बढ़नी से रात के अन्ध-

कार से मैले आसमान को बटोरता पृथ्वी के नीचे से निकलता हुआ देख पड़ा। मुझे माघ माहात्म्य का यह श्लोक याद आया—

माघेमासि रटन्त्यायः किञ्चिदभ्युदि तैरवौ।
ब्रह्मघ्नं वा सुरापं वा कम्पतन्तं पुनी महे॥

मैंने सोचा तब यही तो समय पुण्य लूटने का है। चट्ट कपड़ा उतार गंगा के ठिठरते पानी में कूद पड़ा। कूदने के पहिले तक की तो मुझे बखूबी होश है उपरान्त फिर मैं नहीं जानता कि मुझे क्या हुआ और मैं कहाँ हूँ। मैं नहीं समझता इसे बेहोशी कहूँ या स्वप्न कहूँ या उसी तरह की एक "विज़न' कहूँ जैसा मूसा को सीनियाई पहाड़ पर हुई थी। अस्तु,

मुझे ऐसा मालूम हुआ कि पृथ्वी से आकाश गोलक बे-ओर-छोर लम्बी लाखों-करोड़ों डंडों की एक सीढ़ी लगी हुई है जिस पर से लाखों-करोड़ों देवयोनि कोई श्यामवरण चतुर्भुज, आकण्ठ-लम्बिनो बनमाला और पीतपट पहने किरीट-मुकुट धरे कोई कर्पूर पुरोज्ज्वल शरीर सर्वाङ्ग भस्मोद्धूलित त्रिनेत्र अक्ष और स्फटिक की माला कण्ठ से पाँव तक धारण किये सिर पर जटा और भालपट्ट में चन्द्रमा से सुशोभित था। कोई ऊपर से उतरते हुये कोई नीचे से ऊपर को चढ़ते हुए देख पड़े। उन्हीं में के कई एक मेरी ओर झुक पड़े और ज्यों ही मेरा हाथ पकड़ना चाहा त्यों ही हाथ का इशारा कर मैं बोला—ठहरो, ठहरो, आप मुझे कहाँ लेजाइयेगा ? वहाँ पहुँच मुझे कहाँ जाना पड़ेगा ? कैसे रहना होगा ? वहाँ की रहन-सहन नशिस्त बरखास्त का क्या कायदा है ? कैसे लोग मेरे साथी और पासी-पड़ोसी होंगे ? क्या वहाँ रेल नहीं है कि उसी पर बैठाय आप चट्ट मुझे वहाँ पहुँचा दें। इस सैकड़ों कोस की लम्बी सीढ़ी चढ़ते-चढ़ते तो मैं थक जाऊँगा पाँव दुखने लगेंगे ! सनातन धर्म और आर्यसमाज का झगड़ा सुनते-सुनते मेरा कान फूट

गया। क्या वहाँ भी तो मुझे यही न सुनना पड़ेगा ! बेशरमी और बेहयाई के खान ये नागे क्या ऐसा ही वहाँ भी मेरे नेत्रों को क्लेश पहुँचावेंगे और कुढ़ावेंगे। और मुझे याद नहीं मैंने क्या-क्या बातें उनसे पूछी ! वे देवयोनि मेरी यह बात सुन अचरज में आए और आपस में कहने लगे मनुष्य कीट में यह तो कोई अद्भुत पुरुष देख पड़ा। ज़िस स्वर्ग के लिये लोग ललचाते हैं कठिन तपस्या अनेक नियम व्रत, दान, तीर्थ करते हैं वहाँ जाने से यह आगा पीछा कर रहा है। उनमें से एक जो उनकी फ़ौज का अध्यक्ष था बोला —नहीं नहीं ये सब बातें तुम वहाँ एक भी न पावोगे। तुम कहो तो पहले मैं उन्हीं का दृश्य दिखला कर तब मैं तुम्हें उस विमल स्थान में ले चलूँ जहाँ ले जाने के लिये मैं नियत किया गया हूँ। तुम समझते हो इसी तरह की सीढ़ी उन कुमार्गियों के लिये भी तैयार की गई हैं जो विवेक को मन में बिना स्थान दिये अंध परम्परा के सूत्र के भरोसे गंगा में केवल चूतर बोर लेने ही से स्वर्ग का सीधा मार्ग समझते हैं।

इतने में सूर्य देव की गरम-गरम किरणें मेरे अङ्ग-प्रत्यङ्ग में शीत में डूबे मरणासन्न को चन्द्रोदय के समान बेधने लगी। गंगा के ठिठरते पानी का असर जाता रहा होश आया देखा तो न वह लम्बी सीढ़ी है न देवदूत है। भेड़िया धसान का हुल्लड़, अलबत्ता चारो ओर मच रहा है।

"मनः पूतं समाचरेत
शुचिमनो यद्यस्ति तीर्थेन किम्"

इत्यादि, वाक्यों के गम्भीर अर्थ को सोचता हुआ मैंने भी अपने घर की राह ली !

अक्टूबर १८९३

# (२) त्रिदेव कल्पना

हमारे देश के एक प्राचीन पंडित जो कुछ दिन पूर्व इस संसार से अन्तर्धान हो गए एक अद्भुत युक्ति से त्रिदेव कल्पना करते थे। उनका कथन जहाँ तक हमें स्मरण है वह अपने रसिक पाठकों के अवलोकनार्थ यहाँ प्रकाश करते हैं।

उक्त पंडित जी का कथन था कि ब्रह्मा, विष्णु रुद्र ये तीनों देवता सदैव संसार में प्रत्यक्ष रहते हैं; मनुष्य के नित्य नैमित्तिक बर्ताव और व्यवहार में काम आते हैं और उन्हीं की दयादृष्टि से मानुषी सृष्टि का निर्वाह होता है। वे कहते थे कि मर्यादा परिपाटी स्थापक जाति आदि के विभागकारी प्रथम देव ब्रह्मा हैं और सब के प्रतिपालक सत्वगुणाधिकारी राजा प्रजा के मित्र विष्णु हैं और तेजस्वियों में सब से बड़े सब के राजा और संहारकारी सकल शक्तिसम्पन्न भगवान रुद्र हैं।

उक्त पंडित जी कपास को ब्रह्मा बतलाते थे कि इसके चारों टेर जिससे रुई निकलती है ब्रह्मा के चारों मुख हैं उसी रुई से तीनों गुण अर्थात् तागे निकलते हैं। श्वेत तागा सत्व गुण है लाल रंग में रंग जाने से रजो गुण और काले रंग से तमोगुण के तागे होते हैं। ब्रह्मा सृष्टि की मर्यादा के नियायक हैं। जिन्हें कुछ भी मानुषी ज्ञान प्राप्त हुआ है वे कपड़ा पहनने लगे हैं। बनमानुषों में अभी तक नग्नता देखी जाती है। ब्रह्मा का नाम पितामह (बाबा पुरखा पुरनिया) इसी लिये है कि वे अपने बाल-बच्चों को वस्त्र से ढाँपे रहते हैं। सब लोगों में यह गाथा प्रसिद्ध है कि मनुष्य जाति को ब्रह्मा ने पृथक पृथक वर्ण और जाति में विभक्त किया है सो यह बात कपास ही के गुण अर्थात् तागों में है कि उससे सब प्रकार के

कपड़े बनते हैं जिनके पहनने से पृथक-पृथक वर्ण और समुदाय की पहिचान होती है जिसके गले में यज्ञसूत्र ( जनेऊ ) डाल दो लम्बी ढीली-ढाली बनारसी धोती पहना दो वह उसी समय चाहे जो हो ब्राह्मण ही प्रतीव होगा। ऐसे ही वीर पुरुष की-सी कछनी और टेढ़ी बाँकी पगड़ी आदि से सजे बजे लोग चाहे जो हों क्षत्री प्रतीत होते हैं। इसी प्रकार अपने-अपने अनुकूल वस्त्र के आच्छादन से वैश्य, शूद्र तथा इतर देश-देशान्तर वासी विलायती लोग प्रतीत होते हैं। यहाँ तक कि एक अच्छे कुलीन शौचाचार सम्पन्न यम-नियम व्रतधारी द्विजाति को भी कोट पतलून पहिना अंगरेजी टोपी सिर पर रख दो तुरन्त अंगरेजी बाजावाला तंबूर्ची या मटियाफूस साहेब जँचने लगेगा जैसे कि नायकों के अभिनय में वस्त्रादि के परिवर्तन से अनेक स्वाँग दिखलाए जाते हैं !

उक्त पडित जी विष्णु भगवान अन्न को कहते थे और यह प्रमाण देते थे—

अन्न ब्रह्ममयो विष्णुर्भोक्ता देवी महेश्वरः"

और यह ध्यान पढ़ते थे

"शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं
विश्वाधारं गगन सदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम्
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यान-
गम्यं वन्दे विष्णुर्भवभयहरं सर्वलोकैक नाथम्"

भगवान अन्न का आकार शान्त है क्योंकि जब भूख से पेट खाँव-खाँव करने लगता है उस समय अन्न के पेट में जाते ही अद्भुत शान्ति और प्रसन्नता प्राप्त होती है। 'भुजगशयन्' अन्न देव खेत और खत्तों मे सर्प के समान महीनों और वर्षों तक पड़े पड़े शयन करते हैं जब तक दुर्भिक्ष मनाने वाले बनिये उन्हें न जगावें। पद्मनाभ अर्थात् कोट हान कोट है नाभि मध्य भाग जिसका—'सुरेश' देवताओं के स्वामी हैं—'विश्वाधारं' अन्न

ही के आधार से संसार रथ बना हुआ है—"गगन सदृशं" शून्य है तुलना जिसकी अर्थात् जगत में इनके समान कोई नहीं है "मेघवर्णं शुभाङ्गं" अर्थात् मेघ के समान नीला और अच्छा रंग होता है जिनके पेड़ और पत्तों का। 'लक्ष्मी' अर्थात् शोभा के कान्त हैं बिना अन्न पेट में गए भाँति-भाँति की बनावट सजावट सब फीकी मालूम पड़ती है। कमल नाम जल का भी है सोई है नेत्र जिनका बड़े-बड़े योगियों का भी ध्यान अन्न की ओर रहता है ऐसे विष्णु "व्यापक" अन्न भगवान सबके भय को मिटाते हैं और सर्वलोक अर्थात् हिन्दुस्तान, इङ्गलिस्तान, अमेरिका आदि देशों में एक ही नाथ प्रभु हैं। जिस देश में एक साल भी अन्न नहीं होता वहाँ की प्रजा अनाथ के भाँति बिलबिलाती फिरती है और जब कभी प्रजा पीड़ा होती है तो यही अन्न भगवान उसे निवृत करते हैं। इसी से जयदेव कवि ने अपने गीतगोविन्द में अन्न रूप भगवान विष्णु की बड़ी प्रशंसा लिखी है—

वेदा नुद्धरते जगन्निवहते भूगोल मुद्बिभ्रते दैत्यं तारयते बलि छलयते क्षत्र क्षयं कुर्वते। पोलसत्यान जपते हल कलपते कारुण्य मातन्वते म्लेच्छामूर्छयते दशाकृति कृते कृष्णापतुभ्यं नमः"

बड़े भयानक समयो में ऋषियों को उञ्छवृत्ति के द्वारा भगवान अन्न प्राप्त हो उनकी सहायता से वेदों का उद्धार करते हैं। जिस देश में अन्न देव दृढ़ रूप से रहते हैं उस देश को दुर्भिक्ष की आपत्ति से बचाते हैं जैसे कच्छप अपने अधोभाग में स्थित जल जन्तुओं को बचाता है। पूर्वकाल में अन्न भगवान ने इस प्रकार की कच्छपी-वृत्ति से प्रजा को बचाया था इसी से कूर्मावतार की समता अन्न में आती है। जब कोई राजा "हिरण्य" सोने का लालची हो अन्न देव की भक्ति से विमुख हो केवल "हिरण्य" सोने ही पर दृष्टि रखता है प्रजा का कल्याणकारी अन्न की वृद्धि में विघातक होता है उसका नाम हिरण्याक्ष होता

है, अर्थात् 'हिरण्य' केवल सोने पर अति-दृष्टि रखने वाला उस समय अन्न देव वाराह के सामान उक्त लालची राजा पर चोट करते हैं और पृथ्वी को उधार लेते हैं। दूसरे हिरण्य "काश्पु" तकिया या सहारा को कहते हैं अर्थात् जो राजा प्रजा के सुख दुख को सहानुभूति न रख टैक्स पर टैक्स लगा कर केवल सोना ही बटोरने के लिये राज्य करते हैं इनको नरसिंह अर्थात् सभ्यता और हिंसकता दोनों गुण युक्त होकर अपनी अन्नाश्रिता प्रजा रूपी प्रह्लाद की रक्षा करते हैं। 'बलि छलयते' जब किसो राजा का बलि अर्थात् राज प्राप्य भाग अत्यन्त बढ़ कर सकल सृष्टि के भाग को अपने पेट में डालकर स्वयं शतक्रतु बना चाहता है उस समय अन्न देव अप्रसन्न हो उपेन्द्र वामन की पदवी को धारण कर उस उपद्रवी राजा को छलते हैं। अपना अंग संकुचित कर महँगी और काल के द्वारा प्रजा से प्राप्य राज कर में हानि डाल देते हैं।

"क्षत्र क्षयं कुर्वते"

जब राज पक्ष से अन्न भगवान की कृषि पद्धति छिन्न भिन्न हो जाती है उत्तम-उत्तम गेहूँ आदि सुस्वादु अन्न राज पक्ष से खिंच जाता है प्रजा निर्बल और अस्त्र शस्त्रहीन कर दी जाती है चोर उचक्के अथवा हिंसक जंगली जन्तुओं से सताई जाती है उस समय अन्न देव परशुराम का विग्रह धारण करते हैं।

"पौलस्त्यं जयते"

जब कोई क्रोधी कामी राजा रावण अर्थात् प्रजा का रुलाने वाला बनता है और सीता अर्थात् खेती की लांगल पद्धति या हल रेखा की अफ़ीम और नील आदि की खेती से स्ववश या कैद में डाल कृषि को कर्षित और कृश ( दुर्बल ) कर देता है उस समय अन्न भगवान सीता अर्थात् कृषि पद्धति की मुक्ति के लिये रावण ( रुलाने वाले ) राजा और उसके साथ कृषि साहित्य

विनाशियों को दंड दे फल फूल भोजियों की सहायता से अपनी कृषि पद्धति रेखा को स्वतंत्र कर सम्पूर्ण प्रजा के चित्त में रम जाते हैं उस अवस्था में अन्न देव का नाम राम होता है। हल द्वारा कृषि का सब कार्य होता है तब हली बल देव जी अन्न को कहना ही उचित है। अन्न भगवान अपनी रक्षा से सृष्टि की पूर्ण रक्षा समझ दया का विस्तार करते हैं और जीव हिंसा को रोकते हैं। उस समय बुद्धि के अनुकूल काम करने से बौद्ध कहलाते हैं पर जब उनका कहा कोई नहीं मानता; अन्न विष्णु की लक्ष्मी मानुषी सृष्टि की परम उपकारिणी गौओं का संहार अधिक बढ़ जाता है तब अन्नदेव गुप्त हो जाते हैं, दैवी शक्ति से समुत्पन्न क्षुधा रूप विकराल तलवार समस्त गोभक्षियों का संहार कर देती है तब अन्न देवका नाम 'कल्की' पड़ता है ऐसे दशावतारी कृष्ण के लिये नमस्कार है।

अब रजत रुद्र भगवान का वर्णन सुनिए। जो जगत के राजा है जिनकी प्यारी शक्ति का नाम 'सुवर्ण' है रजत रुद्र और अन्न विष्णु से बड़ी मैत्री है।

"माधवो माधवा धोशौ मे परस्पर हितैषिणौ"

रजत रुद्रोपासकों के घर अन्न विष्णु और अन्न विष्णु पासकों के यहाँ रजत रुद्र निवास करते हैं, जिनके ध्यान का यह श्लोक है—

"शुक्लाम्बर धरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजं
प्रसन्न वदनं ध्यायेत् सर्व विघ्नोपशान्तये"

सफेदी रूपी वस्त्र को धारण किये विष्णु अर्थात् सब जगह व्यापक पूर्णमासी के चन्द्रमा समानं गोल-गोल और चतुर लोग जिन्हें काम में ला सकते हैं जिनकी प्राप्ति से मुख प्रसन्न हो जाता है जिनके प्रभाव से सब विघ्न दूर हो जाते हैं ऐसे रूप चन्द्र का मैं ध्यान करता हूँ। जब रुद्र भगवान वृषभ पर चढ़ कर चलते हैं

तो उनके साथ साथ अनेक रुद्र के गण श्याम ललित वस्त्र पहने हुए दुर्गा 'तलवार' ज्वालामुखी 'तुपक' महाकाली 'तोप' उनकी रक्षा करती रहती हैं जब रुद्र भगवान का विराट रूप बहुत बढ़ जाता है तो उनके उपासकों का प्रेम रुद्र की प्रधान शक्ति सुवर्ण में खिंच जाता है।

"शैव्रात शाक्तो विशिष्यते"

उसी प्रधान शक्ति सुवर्ण की खींचाखीची ने विलायत में ऐक्सचेंज बट्टा बढ़ जाने से भारतवर्ष के व्यापारियों का रुद्र देव संहार करते जाते हैं। ताम्रखंड डबल पैसा आदि छोटे-छोटे रुद्र गण हैं और कौड़ियों का ढेर भूत-प्रेत पिशाचों का दल है जो सदा रुद्र महाराज के पीछे लगे रहते हैं। विष्णु अन्न को बदल कर रुद्र रजत और रजत रुद्र को बदल कर अन्न विष्णु मिल सकते हैं इसी से इन दोनों की उपासना मिली जुली पाई जाती है। लिखा भी है।

"शिवस्य हृदय विष्णु विष्णोश्च हृदयं शिवः"

अन्तर केवल इतना ही है कि रुद्र तमोगुणी पच वक्त्र हैं। उनके उपासक तामसी, प्रबल और अभिमानी होते हैं और विष्णु अन्न के उपासक खेतिहर वे बेचारे शान्त शील दबे-दबाये पड़े रहते हैं। विषम नेत्री रुद्र गणों के द्वारा उन पर अधिक अन्याय होने लगा है ऐंसे समय में अब अन्न विष्णु अपने विराट वैभव को घटाते जाते हैं जो पहले अन्न का भाव था उसका आधा भी अब नहीं है यह लक्षण प्रजा के बड़े अभाग्य का है क्योंकि मनुष्य मात्र का जीवन अन्न की बृद्धि धेनु रूपा महालक्ष्मी के अधीन है। जैसा मन्त्र भा है—

"या लक्ष्मीं सर्वभूतेषु लोकपालेषु संस्थिता
धेनु रूपेण सा लक्ष्मी मम पापं व्यपोहतु"

इसमें कुछ सन्देह नहीं कि धेनुरूपा लक्ष्मी के हीन-दीन होने

के कारण अन्न भगवान जब सर्वथा अन्तर्ध्यान हो जाँयगे तो रजत रूपी रुद्र और सुवर्ण रुद्र शक्ति के उपासकों की भी बड़ी हानि होगी क्योंकि रुद्र भगवान विष्णु भगवान की सहायता और हृदयस्थ होने के बिना प्राण रक्षा की सामर्थ्य किसी की नहीं है इसलिये रुद्र गणों को उचित है कि अन्न भगवान और धेनुरूपा लक्ष्मी को पीड़ा पर विशेष ध्यान देकर जगत के कल्याण का उपाय सोचैं। अभी सबेरा है :—

"गुन्तमूलं बल पुसां।

जून १८८८

## (३) स्त्रियाँ

स्त्रियाँ किसलिये हैं—हमारे शास्त्रों के अनुसार मर्द को सुख पहुँचाना इनका मुख्य काम है—न स्त्रीस्वातन्त्र्य मर्हति' मनुके इस वाक्य का भी यही प्रयोजन सिद्ध होता है। मर्द हर हालत में और तीनों पन में स्त्रियों का मुहताज रहता है। बचपन से बुढ़ापे तक विना इनके अपना काम न चलता देख मनु महाराज ने यह लिख दिया कि मर्द इनको अपने ताबे में रख इनसे अपना काम निकाला करे। स्त्री और पुरुष दो जाति के बीच जैसा परस्पर का बर्ताव है उससे हमारी ऊपर की बात कि स्त्रियाँ पुरुषों के सुख के लिये हैं अच्छी तरह स्पष्ट है। अलावे मुहब्बत के माता अपने पुत्र को पालना, रोग-दोख, घाम-छाँह से बचाये रखना अपना मुख्य काम समझती है। बहन अपने भाई का—देवरानी अपने देवर का सब काम कर देना अपना धर्म मानती है। स्त्री अपने पति को आराम और हर्ष पहुँचाना अपने लिये सबसे श्रेष्ठ काम वरन् अपने जन्म की सफलता मानती ही है इसे कौन न स्वीकार करेगा।

किसी-किसी देश मे जहाँ सभ्यता अपनी चरम सीमा को पहुँची है स्त्रियों को मरदों के बराबर का दावा है यहाँ तक कि अमेरिका में स्त्रियाँ फौज तक में भरती हैं। इंगलैण्ड में कितनी स्त्रियाँ बैरिष्टर हैं किन्तु हमारे यहाँ इसकी चलन नहीं है इसलिये स्त्रियों की दशा के परिवर्तन पर बहुत जोर देना व्यर्थ है! मकान की दुरुस्ती, लड़कों का आराम, रसोई इत्यादि कई एक काम इनके सिपुर्द किया गया है जिस घर में स्त्रियाँ सुशील और सुघर हैं वहाँ इन सब बातों का आराम है उस घर में जाते ही चित्त प्रसन्न होता है लिखा ही है :—

माता यस्य गृहे नास्ति पत्नी वा पति देवता ।
अरण्यं तेन गन्तव्यं यथारण्यं तथा गृहम् ॥

सब सुख की खान माँ जिसके न हो अपना परम पूज्य देवता मानने वाली पतिव्रता पत्नी घर में न हो उसे चाहिये घर त्याग वन को सिधारै क्योंकि उसके लिये जैसा घर वैसा बन। सच है घर की स्त्रियाँ सुलक्षणा लक्ष्मी-रूप हुईं तो उस गृहस्थ को गृहस्थी के सुख के सामने स्वर्ग सुख भी अल्प है। वही फूहर और कर्कशा हुईं तो घर क्या वरन् मुहल्ला और जाति भर को क्लेश और हानि पहुँचती है वह घर क्या वरन् नरक से भी बुरा है। चार में एक भी जहाँ इस ढङ्ग की हुई तो एक उस कर्कशा और चण्डी के कारण तीनों का सुलक्षण और सुघरपन सब खाक में मिल जाता है। प्राणी-प्राणी का जी ऊब उठता है। यही जी चाहता है घर छोड़ कहाँ भाग जायँ। घर से बन को अच्छा इसी दशा में कहा है—

स्मारं स्मारं स्वगृह चरितं दारुभूतो मुरारि :

इन कर्कशाओं का कुछ ढङ्ग ही निराला है ये किस बात से प्रसन्न हैं और क्या चाहती हैं इसका भेद जानने में कदाचित उशना और वृहस्पति की बुद्धि भी थक कर गोठिल पड़ गई। सास से लड़ैं, ससुर से लड़ैं, ननद से लड़ैं मर्द मुआ तो इनका गुलाम ही ठहरा जेठ-जेठानी, देवर-देवरानी की कोई हकीकत ही नहीं, बहन-बहन लड़ैं, परोसी से राह चलने वालों से लड़ैं, न कोई मिलै तो हवा से लड़ैं, जब तक पेट भर के न लड़ लें अन्न न पचै। शकल देखो तो भूतिन-सी मानो सब चुड़ैलों की, अम्मा श्मशान से उठी चली आ रही है। चाल-ढाल, बोल-चाल किसी में जरा शऊर और सुघरपन का दखल नहीं, कसीफ और मैली ऐसी पास से निकल जाय तो दिमाग़ के रेज़े रेज़े उड़ने लगैं, घर में जाकर

देखिए तो भिन-भिनाहट और मैलेपन से ओकाई आने लगे।

देखिए! अब उधर भी नजर फैलाइये—स्वरूप देखिये मानों साक्षात् लक्ष्मी। मुँह से बोल निकला मानों फूल झर रहा हो। अंग-अंग की सजावट कोमलता सलोनापन और सुकमारता से मन हरे लेती है। चाल ढाल, रहन-सहन में कुलाङ्गनापन और भलमनसाहत बरस रही हैं। धन्य है उनका जीवन और महापुण्य भूमि है वह घर जिसे "असूर्यंपश्या ऐसी स्त्रियाँ सती सावित्री समान अपने पादन्यास से पवित्र करती हुई दीपक समान प्रकाश कर रही हैं—

"दृष्टया खंजन चातुरी मुखारूपा सौधाधरी माधुरी वाचा किंच सुधा समुद्र लहरी लावण्यमा मन्त्र्यते"—अन्यच—"गतागत कुतूहलं नयन योरपांगवधि स्मितं कुलनत भ्रुवा मधर एव विश्राम्यति-वचः प्रियत मफुतेरतिरेव कोपक्रमः कदाचिदपि चेत्तदा मनसि केवलं मज्जति" इनकी देह प्रभा सफाई लवनाई और निकाई देख किसका मन नहीं मोहता इसी से स्त्रियाँ गृहस्थी की सार समझी गई हैं। सभ्य और शाहस्ता मुल्कों में जहाँ औरतें पढ़ी-लिखी हैं वहाँ इनमें सखुन आराई और गप्प कोई आश्चर्य नहीं वरन् हम लोगों के समाज में भी जहाँ औरतों की हालत बड़ी लचर हो रही है पर बात करने में हजार मर्दों का कान काटे हुये हैं।

लोग कहते हैं औरतें बड़ी बातून होती हैं। हम कहते हैं केवल कहने ही में क्यों? कौन सी ऐसी चीज है जिसमें औरतें मर्द से अधिक बढ़ी-चढ़ी नहीं हैं। जहाँ कहीं वे पढ़ाई-लिखाई जाती हैं वहाँ स्त्रियाँ पुरुषों के ऊपर हो गई हैं। हमारे यहाँ के ग्रन्थ-कार और धर्मशास्त्र गढ़ने वालों की कुण्ठित बुद्धि में न जाने क्यों यही समाया हुआ था कि स्त्रियाँ केवल दोष की खान हैं गुण इनमें कुछ हई नहीं। इसी से चुन-चुन उन्हें जहाँ तक ढूढ़े मिला केवल दोष ही दोष इनके लिखे गए और जहाँ तक इनके

हक़ में बुराई और अत्याचार करते बना अपने भर सक न चूके और उन्हें हर तरह पर घटाया। कानून में इनका सब तरह का हक़ मार दिया, धर्म सम्बन्ध में इन्हें प्रधान न रखा, दरजे में इन्हें और महा जघन्य शूद्रों को एक ही माना और किसकी कहैं मनु जिसके समान चोखा और हर एक समय में बरतने के पक्षपात विहीन शास्त्र प्रणेताओं में किसी दूसरे का धर्मशास्त्र ऐसा नहीं है उन्होंने शूद्र और स्त्रियों की सब तरह पर रेढ़ मारी है। खैर, आर्यों के मुकाबले जो शूद्रों को घटाया सो तो उनकी पालिसी थी जेता और जित दोनों एक ही क्यों कर हो सकते हैं किन्तु हमारी निपट ललनाओं का जो सब भाँत सत्यानाश किया इसे कौन न कहैगा कि उनके धर्मशास्त्र में यह एक कलङ्क का टीका है!

अस्तु, हमारा पूर्वगत प्रस्ताव यह था कि स्त्रियाँ पुरुषों से सब तरह पर चढ़ी बढ़ी है यह बात बहुत ही सटीक और सच है। मुहब्बत और स्नेह जैसा इनमें हैं मर्दों के कट्टर कलेजे में कभी समा ही नहीं सकता। धर्म और दया की तो ये मूर्ति होती हैं। हमारा हिन्दू धर्म जिसे सब लोग लचर कह कर धकिआये फिरते हैं इन अवलाओं ही की दया के सहारे से किञ्चित टिक रहा है। मुन्तजिम ऐसी कि टोडरमल की अक़िल भी इनके इन्तज़ाम के आगे चक्कर में आती है। पुरखिन पुरनिया स्त्रियों को उनके घर का इन्तजाम छोटी-मोटी सल्तनत का नमूना है। सिवा इसके अब भी हम लोगों में ऐसी-ऐसी बुद्धिमती चतुर सयानी स्त्रियाँ पड़ी हैं जो कोठी और इलाके का वरन् राज का भी सब काम सम्हाले हैं। लज्जा, धैर्य, सबर, सहिष्णुता, गमखोरी इत्यादि गुणों में जो ये एकता हुईं तो कोई विशेष तारीफ की बात नहीं क्योंकि हया दया मया गम आदि स्त्रियों ही के गुण हैं। हम कहते हैं वीरता आदि बहुत से पौरुषेय गुण जिनमें

मर्द डींग मार-मार अपना दर्जा स्त्रियों के ऊपर कायम रखते हैं उनमें भी वे स्त्रियाँ कितना आगे बढ़ी हैं। चाँद सुल्ताना, अहिल्याबाई, बैजाबाई आदि जो पहले हो गईं उन्हें कौन गिनावे। हाल में झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई एक ऐसी हो गई कि बड़े-बड़े वीर-बाँकुरों से भी ऐसा कभी न हो सकता।

अपने सौन्दर्य को बढ़ाना और अपने को दिखलाना इनमें स्वाभाविक होता है यह धर्म बुरी भली सबों में एकसा होता है। कुछ बुरे ख्याल से नहीं किन्तु यह स्वाभाविक धर्म इनका है। कोइला-सी काली कलूटा भी अपने को बन-ठन एक बार तिलोत्तमा और उर्वशी को अपनी रूप की सजावट में दबाया चाहती है तब उनकी कौन कहै जो रूप-गर्विता हैं। इत्यादि, ललनाओं का गुणगान ऐसा सरस विषय है कि इसे जहाँ तक पल्लवित करते जायँ हमारे पाठकों का मन ललक-ललक कर पढ़ने से कभी न थकैगा।

हम सिद्ध कर चुके कि पुरुषों की कट्टर जाति की अपेक्षा निर्दोष और निष्पाप स्त्री-मात्र विशेष गौरव के योग्य हैं। अब हम यह दिखाया चाहते हैं कि अबलाओं में भी हमारी भारत की ललना गुण गौरव में प्रथम और सर्व श्रेष्ठ हैं। अपना तन मन जला कर और सर्वस्व सुख से हाथ धो कुल की मर्यादा का निर्वाह कर देना आर्य कुल कामिनी ही जानती हैं। जो यूरोप की सुशिक्षित रमणी सौ बार जन्म ले कर भी नहीं कर सकती।

गोल्डस्मिथ अपने एक हास्य प्रधान लेख में लिखते हैं—मैं एकबार कबरिस्तान की सैर करता हुआ एक कोने में जाकर देखा तो एक नौजवान सुन्दरी टटकी बनी हुई कबर पर कोमल कर कमलों से पङ्खा झल रही है मेरे जी में इस समय अनेक भाव उदय हुये मन में कहने लगा सच्चा प्रेम इसी का नाम है। पास जा सलाम कर बोला-निस्सन्देह आपका प्रेम संसार में एक उदाहरण होने योग्य है। परलोक में इस मृतक की आत्मा को क्यों न सन्तोष हुआ

होगा जिसके लिये आप अपने कर कमलों को इतना श्रम दे रही है। यह बोली इसके सन्तोष से मुझे अब क्या मिलेगा। अब यह फिर से जी सकता ही नहीं मुझे अपने सन्तोष को पड़ी है। समाज में प्रचलित रीति के अनुसार जब तक यह कबर न सूखैगी तब तक मैं अपने ऊपर से इस रण्डापे का बोझ नहीं टाल सकती इसीलिये पंखा झल रही हूँ कि जितनी ही जल्द यह कबर सूखैगी उतना ही जल्द मेरा सुहाग फिर से जगेगा। मुझे इस सुन्दरी की बात सुन ताज्जुब हुआ। भीतर से तो इसकी व्यर्थ चेष्टा पर अत्यन्त क्रोध आया पर ऊपर से हँस कर उससे बिदा हो घर की राह ली।

यह क़िस्सा गोल्डस्मिथ की एक कल्पना मात्र है किन्तु इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि उनकी सभ्यता का धब्बा वहाँ स्त्रियों में स्वतन्त्रता इसी दरजे तक पहुँची हुई है जिसका चित्र गोल्डस्मिथ ने इस ढंग से उतार हँसी उड़ाया है। भारत ललनाओं में बन्धकी और कुलटायें भी इतना साहस करने की हिम्मत न करैंगी जैसा वहाँ अच्छे-अच्छे घरानो की कुलाङ्गनायें करती हैं। हमारी ललनायें पढ़ी-लखी नहीं होतीं पर शालीनता, धीरपन, सबर और सहन-शीलता में पृथ्वी भर की स्त्रियों के बीच एक उदाहरण हैं। पुरुषों में शुद्ध चरित्र और पवित्र आचरण ढूँढ़ा चाहो तो सौ में पंचानबे अत्यंत निकृष्ट और पतित पाये जाँयेंगे जिनके गुप्त या प्रकट चरित्र पर घिन होती है। वहीं इन आर्य ललनाओं में सौ में कदाचित् पाँच भी ऐसी हों या न हों जिनके चारित्र को हम दुषित कहने का साहस कर सकेंगे और पञ्चानवे ऐसी होंगी जो सौन्दर्य और सौभाग्य लक्ष्मी में साक्षात् शची-सी होकर भी नवनता, भलमन साहत, सिधाई और सरल भाव में मानो भवानी की मूर्ति हैं। कुलीनता की नाक,लज्जा की खान, श्रद्धा, दया और शान्ति की मूर्ति,

घर की सर्वस्व सम्पति, हमारी गृहेश्वरी वामा जन भारत को इस गिरी दशा में भी कौम का ज़ेवर और आर्य्य जाति का शृङ्गार है।

हम अपनी सती सच्चरित्र अबलाओं का जितना अभिमान करें सब थोड़ा है। विशेष कर ऐसी दशा में जब हम अपनी अशिक्षित कुलाङ्गनाओं का यूरोप की सुशिक्षित सभ्यता की सिरताज रमणी जनों के साथ मिलान करते हैं। साहब बहादुर हजार रुपया भी लावें ता मेम साहब के एक गौन में उड़ जाते देर न लगेगी। साहब एक-एक पैसे की किफायत करते हैं मेम साहब को अपने फैशन की सजावट में सैकड़ों फूक देते आह नहीं आती। साहब एक कोने में पड़े भिन-भिनाया करते हैं मेम साहब अपनी चञ्चलता और चुलबुले पन के कारण बँगले को कूदती फिरती है। साहब मेम साहब की चरण सेवा में हरदम हाज़िर रह कर भी जरा सा चूके कि उनकी खातिर शिकनी होते देर नहीं। वहां हमारी स्त्रियाँ परकटा पखेरू की भाँति घर रूप पिञ्जरे में बन्द रूखा-सूखा भोजन और मोटा-झोटा कपड़ा मात्र से सतीत्व पालन करते बैठी रहती हैं। बाहर बाबू साहब अपने सुख और आराम के लिये सैकड़ों रुपये बहाय देते हैं; नई-नई कलियों के रस का स्वाद लेते डोलते फिरते हैं। पति-देवता हमारी गृहेश्वरियों को उनके पतित पति कभी धोखे से भी एक बार उन पर चितैं दें तो इतने ही से निहाल हो जाती हैं। धन्य हैं इनके धैर्य और सबर को। देश की दुर्गति के बहुत से कारणों में स्त्रियों की ओर से मर्दों का निरपेक्ष होना भी एक कारण है। मनुमहाराज लिख गए हैं।

जामयो यानि गेहानि शपन्त्य प्रति पूजिताः।
तानिकृत्याह तानीव विनश्यन्ति समन्ततः॥

भली-भाँत आदर न पाय बहू लोग जिस घर को शाप देती हैं वह घराना कृत्याहत के समान सब ओर से नष्ट हो जाता है।

२

सच है असंख्य घराने इन्हीं स्त्रियों की निरपेक्षा के कारण निर-वंशी हो गये कि कौड़ी-कौड़ी को मुहताज भूखो मर रहे हैं।

सचमुच ये कुलाङ्गना बधूजन लक्ष्मी का रूप होती हैं। अङ्गरेज जो इनकी खातिरदारी और हर तरह इन्हें प्रसन्न रखते हैं उसका फल प्रत्यक्ष देखा जाता है कि दिन-दिन उनकी श्री-वृद्धि चौगुनी होती जाती है। वहीं हम लोगों ने जो सब तरह पर इन्हें घटा दिया और दुर्गति में रक्खा उसका फल भी प्रत्यक्ष है। आर्य-ललनाओं की दशा का परिवर्तन हम तरक्की की पहली सीढ़ी कहेंगे और समाज संशोधन तो कभी संभव नहीं कि इन्हें छोड़ हम कभी एक कदम भी आगे बढ़ सकें। स्त्रियाँ जो निरंकुश और स्वतंत्र हुआ चाहें तो नदी समान कुलरूपी कगारे को एक दम में ढहाय दूर फेंक सकती हैं। यह उन्हीं की कृपा और भलमनसाहत है जो भीतर-भीतर अपना कुलाङ्गनापन निभाती हुई हमें बाहर इस लायक बनाये हुये हैं कि कुलाभिमान में अग्र-सर हो मोछा तरेर-तरेर हम बड़े कुलीन और इज्जतदार वनते हैं।

जुलाई १८९१

# (४) पत्नीस्तव

हे महाराणी पत्नी तुम्हें नमस्कार है। तुम संसार का बन्धन महा जगद्व्याल की मूलाधार हो। एक बार विवाह कर तुम्हारे जाल में फँस जाना चाहिये फिर क्या सामर्थि कि इस छंदान को तोड़ कोई कहीं भाग सके। यह तुम्हारी ही कृपा है कि आदमी एक जोरू कर खुद संसार भर की जोरू आप बनता है। अति अल्प वय दस ही बारह वर्ष की उमर में तुम्हारे जाल में फँस जाने से हिन्दू जाति की कमजोरी, हीन-बल-क्षीण, वीर्य हीन-सत्व हो जाने का तुम्हीं मुख्य कारण हो। हम लोग अल्प बुद्धिवाले किस गिनती में हैं त्रिकालज्ञ पाणिनि ऐसे महर्षियों ने भी तुम्हारी कदर की है "पत्युर्नो यज्ञ संयोगे" पति शब्द को नुक् का आगम हो यज्ञ के संयोग मे। तात्पर्य यह कि धर्म शास्त्र में "पत्न्या सहाधिकारात्" के आधार पर यज्ञ दान आदि बड़े बड़े धर्म के कामों में तुम्हें अपने संग लें तभी पुरुष को उन उन धर्म के कृत्यों का अधिकार है।

शास्त्रवालों ने तुम्हारा महत्व और गौरव यहाँ तक माना है कि "अना श्रमी न तिष्ठेत्" बिना गृहस्थ हुये न रहै ऐसा लिख गये हैं जो इस कारण संयुक्तिक भी मालूम होता है। कहा है:—

'ऋणानि त्रीण्ययाकृत मनो मोक्षे निवेशयेत्'

विद्या पढ़; पुत्र पैदा कर, बड़े बड़े यज्ञ और दान- के उपरान्त तब मनको मोक्ष में लगावै अर्थात् संन्यास ग्रहण करै। ऐसा न होता तो कितने ऐसे सभ्य समाज के सिरमौर

संशोधन और देश हित का बीड़ा उठाये महा महन्त माननीय मान्यवर क्यों सदैव पत्नी-पत्नी रटते; उनके बद्धांजलि वशंवद रहते और विना उनकी आज्ञा के एक कदम आगे पाँव न रखते। तस्मात् हे, पत्नि ! लोक और वेद दोनों तुम्हारी नमस्या और अपचिति में सावधान और प्रवण हैं। हे पत्नि ! तुम्हारे कोमल अङ्ग-सौष्टव का संपर्क; तुम्हारे अधरामृत का पान, बाचाख कोकिला-लाप, कुहू-नाद को तिरस्कार करने वाला तुम्हारे कोकिल-कण्ठ-निर्गत शब्दों को जिसने अपने कानों का अतिथि न किया उस लंडूरे का जीवन ही क्या ? करण रसायन द्वयत्तरात्मक पत्नी शब्द सुन और तुम्हारा मोहनी रूप देख कौन ऐसा युवक है जो आप्यायित हो आनन्द निर्भर न हो जाता हो ! हे आदि रस की अधिष्ठात्री ! शूर-वीर साहब लोग मुल्क के इन्तिज़ाम की चतुराई में कहीं से नहीं चूकते पर तुम्हारे समस्त नाज़ नखरों पर अपना अधिकार जमाना तो दूर रहा एक साधारण गौन के इन्तिज़ाम में उनकी सब भूल जाती है; छोट-भइये औसत दर्जे की तनखाह पाने पर भी सदा कर्जदार बने रहते हैं !

जिस घर में तुम अपना सौम्य-रूप धारण किये हो वहाँ समग्र संपत्ति हँस रही है। जहाँ तुम्हारा विकट भयंकर प्रचण्ड और उद्दण्ड रूप घर के एक एक प्राणी को विकल किये है वहाँ दरिद्र का बास रुदन और क्रन्दन का सहकारी हो हाहाकार मचाये हुये है। सेवा करने में दासी; एकान्त में सलाह देनेवाली मित्र; घर-गृहस्थी की बातों में उपदेश देनेवाली गुरु; पति-भक्ता, पति-प्राणापत्नी उन्हीं को मिलती है जिन्होंने किसी पुण्य तीर्थ में अच्छी तपस्या कर रक्खा है। गज-गामिनी जिसकी चाल के आगे हंसों को अपनी चाल का घमण्ड चला जाता है; जिस पिक-बैनी की वचन माधुरी सुन कोकिला लज्जित हो मौन-व्रत धारण कर लेते है; जिसके नवनीत कोमल अंगों के साथ होड़ होने में चमेली की

कोमलता पत्थर सी कड़ी मालूम होती हैं; शोभा और सौन्दर्य की अधिष्ठात्री लक्ष्मी जिसके लावण्य जलधि की लहरी में अचम्भे में आय गोता खाने लगती हैं:—

"एक नारी सुन्दरी वा दरी वा"

भर्तृहरि की इस उक्ति ऐसी ही सह धर्मिणी के मिलने से सुघटित होती है। इत्यादि, इस पत्नी के गुणार्णव को कहाँ तक पल्लवित करते जाँय। इसकी फल स्तुति में विश्वगुणादर्श का यह श्लोक उपयुक्त मालूम होता है:—

व्यापारान्तरमुत्सृज्य वीक्षमाणो वधूमुखम्।
यो गृहेष्वेव निद्राति दरिद्राति स दुर्मतिः॥

सब काम काज छोड़ जो वनिता-भक्त पत्नी के मुख की छवि निरखता हुआ घर में सोया करता है वह मूर्ख अवश्यमेव दरिद्र का दास बन जाता है।

मार्च १९०४

# (५) वधूस्तवराज

हे ललना ललाम ! हे कुलकामनियों की आदर्शस्वरूप ! हे गुणगरिमाविशिष्ट ! तुम अपने स्वाभाविक सहज गुण से चिराभ्यासी योगियों की सहिष्णुता को सहज ही में जीत लेती हो। हे वंशप्ररोह जननी। यह लाक परलोक दोनों में सुख देने वाले शुद्ध सन्तान के पैदा होने की बीज भूमि तुम्ही हो।

"सन्ततिः शुद्धवंश्या हि परत्रेहच शर्मणे"

देवी, तुम्हारे संख्यातोत अनगिनत दिव्यगुणों को गिन चुकता कर देने की किसकी सामर्थि है। हे वड़े कुनवे वाले गृहस्थों के घर की दीपशिखा-सी समुज्वल वेशधारिणी विविध वेशभूषाविहारणी ! बटो के भाव में जब तक तुम अपने बाप के घर को सुशोभित करती रहती हो तब तक पिता के घर का तुम्हारा अखण्ड स्वर्गीय राज्य को भला किसकी सामर्थि कि खण्डित कर सके ? भौजाइयों पर तुम्हारी सतत हुकूमत उद्धत स्वच्छन्द बिहार और तुम्हारी अठखेलियों का निरुपण लेखिनी की शक्ति के बाहर है। पर ससुराल के लिये देहली से बाहर पाँव रखते ही एकबारगी पतोहूपन संक्रामित हो न जाने पहले की सब बातें किस कन्दरा में जा छिपती हैं। औद्धत्य सहसा विनीतभाव में परिणत हो जाता है। स्वच्छन्दता भूत के आवेश सी उतर कौन जानै कहाँ गायब हो जाती है। देवी, यदि तुम्हें लोकोत्तर सहिष्णुता "बरदाश्त" का बल या भरोसा न होता तो थोड़ी-थोड़ी बात में खाँव-खाँवकर दौड़ने वाली सास तथा ननदों का हठ और जोर जुल्म कैसे सहज में सहने लायक होता। दुर्गा पाठ में लिखा है:—

"विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु"

जितनी विद्यायें सब तुम्हारे रूप हैं संसार में जितनी स्त्रियाँ वे भी सब तुम्हारी ही प्रतिकृति हैं। ग्रन्थकर्ता मार्कण्डेय ऋषि इतना ही गोलमगोल कह चुप हो गये आगे साफ-साफ कहने की हिम्मत न कर सके।

हम कहते हैं देवियों में भी कई तरह की हैं जिनमें एक महाकाली होती हैं। वो जितनी सौम्य और सद्गुण वाली हैं वे सब महालक्ष्मी और सरस्वती हो बहु के रूप में घर की लक्ष्मी बन आती हैं और घर को देव-मन्दिर बना देती हैं। पर जो चण्डी कर्कशा नित्य कलहकारिणी फूहर मैली-कुचैली हैं वह महाकाली के रूप से घर में प्रवेश कर घर को श्मसान तुल्य कर देती हैं। एक-एक आदमी की जिन्दगी उभारु कर दी जाती है "जन्मनष्टंकुभार्या" तस्मात् हे चण्डी, तुम अपना चण्डरूप का संकोच कर सौम्य दृष्टि से हमें आप्यायित करती रहो तो इसी में हमारा कल्याण है। बहुधा जो गृहस्थ हैं जिनको अपने कुल की लाज निभाने का बड़ा ख्याल है वरन सदा इसी चिन्ता में व्यग्र रहते हैं कि चादरे के चार खूंट हैं न हो कि किसी खूंट में दाग लग जाय इसलिये उद्धत हो जाने से मुँह मोड़ सदा सबसे नम्र रहते हैं। मानो शील और संकोच के बोझ से दबे जाते हों ऐसों हीं के घर को देवी तुम बहू बन सुशोभित करती हो। जिनमें ये पूर्वोक्त भाव नहीं आये अपनी हर एक बातों के घमण्ड से तोनों लोक को तिनका तुल्य समझते हैं वहाँ उनके संहार के लिये तुम काली-सी कराल काल-रात्रि हो प्रवेश करती हो। तुम्हारे चण्ड रूप का प्रकाश वहाँ पहुँचते ही सब छिन्न भिन्न होने लगता है और जल्द उस घराने की इतिश्री हो जाती है। इससे हे देवी, यह शक्ति आप ही को प्राप्त है चाहे सोने के पाँव से घर में प्रवेश करो चाहे लोहे के। आपका स्वर्णपद गृहस्थी में समस्त अभ्युदय दायक है

भाग्यवानों के घर की लक्ष्मी बनने को आप सुवर्ण के पाँव से प्रवेश करती हो दरिद्रों के यहाँ आप लक्ष्मी की बड़ी बहन बन कर आती हो। जहाँ आलसी निरुद्यमियों का दल मैले-कुचैले भेष से पेट की अग्नि के मारे काँव-काँव मचाये हुये लड़ रहे हैं; जहाँ पुंवत प्रगल्भा कर्कशाओं का दल अष्ट प्रहर कलह और दाँत किरने का पुरश्चरण कर रही हैं; वहाँ तुम पहुँच उन कराल चण्डियों की चण्डीश्वरी बन बड़ी शोभा पाती हो और तुम्हारे समुचित समागम से उस घर की बुराई के लिये सुख्याति में भो कुछ कसर बाकी नहीं रहती। देवी, आज इस स्तव राज के द्वारा तुम्हारा गुण-कीर्तन कर फल स्तुति में यही प्रार्थना करते हैं कि हमारे पढ़ने वालों को अपने प्रचण्ड कराल भेष के दर्शन से बचाये रहो और जिनके यहाँ कोई ऐसी कराला हों उनको तो इस स्तोत्र का पाठ बहुत ही सामयिक है।

जून १६०६

# (६) कार्तिक स्नान

भाई। वाह कार्तिक-स्नान भी क्या ही कैफियत का नहान होता है। इस साल हमारे पञ्च महाराज पर भी न जाने क्या शामत सवार हुई कि कार्तिक नहाने का हौसला चर्राया। पौ-फट होने के पहिले जब हाथ से हाथ नहीं सूझता था घर से चल खड़े हुये। रास्ते में इन के लड़काई के दोस्त एक बनिता लम्पट से इन की भेट हो गई। पंच महाराज को इस पतित अपाहिजा की अद्भुत चेष्टा और कुढंग देख घिन तो बड़ी हुई जी कुढ़ गया पर क्या करैं आँख की शील न तोड़ सके "अद्यप्रातरेवानिष्टदर्शनं जातम्" इत्यादि, चित्रग्रीव के किस्से का हितोपदेश के कई जुमले याद आये। ईश्वर का स्मरण कर मन में कहा भगवान् तड़के ही इस मनहूस की सूरत देखने में आई न जानिये आज का दिन कैसा कटे। अस्तु, अत्यन्त विनीतभाव से नम्रतापूर्वक बड़े अदब के साथ दूर से पैलगी कर पंचमहाराज भी चोहल के खयाल से इस लम्पट से जा मिले। पञ्चमहाराज की चार आँख होते ही झूमता लड़खड़ाता हुआ यह बोला—ओहो आप भी आये हैं! बहुत दिनों पर आज आपके दर्शन हुये मैंने तो समझा कि इस साल की गोमती की बाढ़ में आप भी कहीं बह गये। खैर, चलिये आप को नहान की कैफीयत दिखलावें। दोनों आगे बढ़े। भगत जी को आते देख—"जैगुपाल साहब!" आपकी लम्बी माला तो खूब ही टट्टी के आड़ में शिकार है। "जाइये जाइये" भीड़ निकली जाती है। बुड्ढे हुये तो क्या जी तो तरोताज़ा टटका बना है आगे बढ़—"यह कौन हैं"—सब पण्डितों के सिरताज महा पंडित श्रीमान् पुंश्चलीदास और कुलटाकुलघालक। राम करै यह जुगुल जोड़ी जुग-जुग जीवै। भला कातिक के नहान को किसी भाँति

रौनक तो पहुँचा रहे हैं—शाबास लगी रहै टकटकी !

"लोचन रोम रोम प्रति माँगों"
"एक टक रहैं निमिष नहिं लागैं पद्धति नई चलाऊँ"
"नैननि उहै रूप जो देखौं"
तौ ऊधो यह जीवन जग में साँच सुफल कर लेखौं"

मनते ये अति ढीठ भये
वौतो आय बोलतौ कबहूँ ये जुगये सुगये
ज्यों भुवंग केचुरी विसारत फिर नहि ताहि निहारत
तैसेहि जाइ मिले इक टक ह्वै उरते लाज निबारत

सच है ये नेत्र नहीं हैं वरन "मनमथ वान दुस्सह अनियारे। निकसै फूटि हियें वहि ओर" रूप माधुरी को पीते-पीते अघाते ही नहीं। स्वर्ग में इन्द्र सहस्राक्ष हैं यहाँ ये दो ही नेत्र से टक टकी में सहस्राक्ष को परास्त करते हैं। टक टकी क्या भीत के उरेहे चित्र भी मात हैं। ये कौन हैं—काकचेष्टा वकध्यानी ! "हाथ गोमुखी में मन सुमुखी में"। आहा ! आप हैं ! बड़ी देर बाद पहचाने गये। अभी नई उमंग है इश्क के कूँचे में पाँव रक्खा है ग्यारह महीने परखते-परखते किसी तरह कातिक आया तो अब क्यों जी को जी ही में रहै। ये कौन हैं—वैष्णवाग्रणी गोमतीदास। गोमतीदासजी, जै श्रीकृष्ण जाइये जाइये लौ लगी रहै:—

"चाहे जियरा जाय लगी कैसे छूटै"
"लम्बा टीका मधुरी बानी दगाबाज़ की यही निशानी"

हमारे लाला जी बड़े सीधे-साधे सज्जन महापुरुष हैं। शील के सागर हैं। करैं क्या ? आँखका रोग लग गया है। एक पन्थ दो काज ! आँख भी सिंक गई; "मानिंगबाक" चेहल कदमी भी हो गई। ये कौन हैं ये शहर के औवल दरजे के रईस हैं क्या करें टकटकी

का शौक इन्हें भी पैदा हो गया है। अपनी सब बात और प्रतिष्ठा को धूर में मिला रहे हैं? लोहे तांबे उतर चुके कोई बात बाकी नहीं है। और ये कौन हैं—ये बाबू साहब हैं। बाबू साहब "वयकनुख्त आबूशवद्" माशा हैं माशा बंगाली माशा, "की तुम्हो भलो वाशो बाबू साहब।" यह कौन आई? सब कुलटाओं की सिरमौर मानो दूसरी कामकन्दला माधवानल को कहाँ छोड़ आई? चल फड़कती छमाछम, यह मारा, वह काटा, यह लूटा।

"अठिलात जात गोरी रंग में भरी"

काम कन्दला के कदम ब कदम यह दूसरे कौन हैं? पोथाधरी कथाक्कड़ व्यास—नमस्कार व्यास जी नमस्कार "नमो व्यासाय महते"।

"जयति परासर सूनुः सत्यवती हृदयनन्दनो व्यासः"

श्लोक का गढ़ने वाला भूल गया आखिर आदमी की अकिल कहाँ तक खता न करे। सत्यवती हृदयनन्दनों की जगह नव युवति हृदयनन्दनो कहना था। गोपियों में कन्हैया इन्हे जो चैन है सो किसी को न होगा, धर्म के वक्ता, अधर्म के कर्त्ता, लम्पटता के राह दिखलाने वाले आचार्य। इनकी रसीली तिरछी चितवन ने कितनी अवलाओं का मन मूठी में करा रक्खा है—

"तिरछी चितवन पीतम प्यारे मन वैरागी मोरा रे"

"जाइये जाइये, मैं आप के आनन्द में बाधक नहीं हुआ चाहता। अब ये विकट सूरत रोरी का आड़ा जमाये कौन आये? "दिनीपवासी जटाधरः सन्कुलटाभिलाषी" महामहोपाध्याय कुक्कुटमिश्र

"गुरोर्गिरः पश्च दयान्यधीत्य बेदान्तशास्त्राणि दिनद्वयं च।
अमीसमाघ्राय च तर्कबादान् समागताः कुक्कुटमिश्रपादाः ॥"

"जाइये जाइये" आपको अभी देर तक सन्ध्या करना है। इनका सा गुप्त होना भी काम रक्खा है "गुप्तो मुक्तः प्रकटो भ्रष्टः" इत्यादि

कुढंगों का कुचरित्र देख पञ्चमहाराज का जी ऊब गया। बड़ी घिन पैदा हुई। उसे अपने साथी से किसी तरह गला छुटाय घर चले आये और कार्त्तिक के स्नान को सदा के लिये प्रणाम किया। जो कुछ वहाँ देखा उसे लेखनी बद्ध कर हमारे पास भेज दिया जिसे हमने भी अपने पढ़ने वालों के चित्त विनोदार्थ यहां प्रकाश कर दिया।

अगस्त १८६४

# (७) रूपवानों में रूप का रहस्य

वाह ! आप की भी क्या ही भौंड़ो समझ है—रूपवानों में रूप क्या है इस छिपे रहस्य का पता लग गया तो छैल-चिकनियाओं के चित्त में रूपवान होने की सब हवसही गई गुज़री हुई। अगर यह लटका हाथ लग। गया तो बाकी क्या रहा मानो ज़िन्दगी का सब हौसिला पूरा हो गया—इसलिये कि कौन ऐसा होगा जो रूपवान होना न चाहता हो अथवा अपने शरीर में जो कुछ कज या ऐब हो उसे दूर करना न चाहेगा। अजी दिन का दिन न सही तो पहर भर घंटा दो घंटा कम से कम घड़ी दो घड़ी तो इसके लिये ज़रूर ही चाहिये।

इस रूप की कसावट को हम कई मद्द कायम करते हैं पढ़ने वाले मिला लैं कि किस मद्द के वे हैं। सच तो यों है कि निपट फेशन की खाक छानने की ख्वाहिश से चेहरे की सफ़ाई, कपड़े और बालों की दुरुस्ती में कौन ऐसा होगा जो थोड़ा समय अपना न लगाता हो। कौन ऐसा होगा जो कुरूप से कुरूप होकर भी औरों से इसमें अपने को हेठा मानता हो। वही कहावत ठीक ठहरती है कि लोग अपने को उन आँखों से नहीं देखते जिनसे कि और दूसरे उन्हें देखते हैं। जिससे सिद्ध होता है कि मनुष्य के लालची चित्त में जहाँ नाम की, पदवी की, औलाद की धन की लालसाये हैं वहाँ रूपवान् होने की हवस भी होती है। किन्तु यह पिछली हवस किसी को पूरी हुई है या पूरा होना सम्भव है सो रूपवानों की जुदी-जुदी मद्द जो हम यहाँ पर कायम करते हैं उससे निश्चय हो जायगा।

रूपवानों की एक मद्द उनकी है कि खाने को चाहे एक

टुकड़ा रोटी भी घर में न हो पर गोरे गालों पर तेलपनिया और छल्लेदार बालों में कंघो दातों में मिस्सो की धज सम्हालते पहरों और घंटों लगे खैर किसी तरह सिंगार कर-कराय फ़ारिग हुवे पान की बीड़ियों से गाल फुलाये बाहर निकले तो इस फिराक में लगे कि कहीं से ऐसे को तलाश करना चाहिये जो हमारी छवि की कदर करने वाला हो और कोटि कन्दर्प लजावन उनके रूप पर मोहित हो नौवाबज़ादों की लिस्ट में उनका नाम दर्ज करले। कहने का तात्पर्य यह कि रूपवान् होने का अभिमान यद्यपि वहुतों को है किन्तु सौन्दर्य या रूप कोई ऐसा चीज़ नहीं है कि उसके फिराक में पड़े रहने से वह हाथ लग जाय।

अब रूपवानों की दूसरी मद पर ज़रा मुलाहज़ा फ़रमाइये। अस्तु, चढ़ती उमर में तो कोई अपने को बदसूरत और कुरूप मानताही नहीं प्रकृति का नियम भी कुछ ऐसा ही है

"प्राप्तेतु षोड़से वर्षे शूकरीप्यसरायते"

किन्तु उमर ढलने के समय आँखों को दातों को मज़बूत खूबसूरत और वजेदार बनाये रखने को लोग क्या क्या नहीं करते क्योंकि जिसको जो बात हासिल नहीं है वह यदि यह मान ले कि यत्न किये से कुछ नहीं होता तो मानो वह अपने जीवन का बड़ा भारी सहारा खो बैठा। खैर, बड़ी कष्ट-कल्पना से सींग कटाय बछरों में दाखिल होने की भाँत चुचके गाल और निचोड़े कपड़े की तरह जर्जरित कलेवर में तेलपनिया कर-कराय रूपवानों में दाखिल भये भीतो लोग यह कभी न कहेंगे कि फलाने के बाल अच्छे हैं जब स्वभाव सुन्दर बालों का मुकाबिला आ पड़ेगा।

तात्पर्य यह कि हम हज़ार बन-ठन अपने कृत्रिम सौन्दर्य से प्राकृतिक रूप की तुलना यदि किया चाहें तो इससे बढ़ कर

बेहूदगी और क्या होगी। प्राकृतिक सौन्दर्य जैसा शकुन्तला के सम्बन्ध में कालिदास ने लिखा है—

"इयमधिकमनोज्ञा बल्कलेनापि तन्वी।
किमिवहि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम् ॥"

आप के बाल, दाँत, आँख, मुह, हाथ, पाँव, यद्यपि स्वभाव ही से बड़े खूबसूरत सुडौल और रूप की पताका हैं तब भी उनमें नित्य संस्कार की आवश्यकता है। एक दिन भी आप बालों में कंघी न करैं दाँतों को न मांजैं चेहरे को न धोवैं तो दूसरे ही दिन उस प्राकृतिक सौन्दर्य में खराबी पैदा हो जाय। साराँश यह कि रूप पाने पर भी नित्य संस्कार की आवश्यकता ही रहती है। कुरूप को रूप वान् होने का यदि खेद है तो रूपवान् को अपना रूप सह्माले रहने के पीछे पूरी मौत है तो जब खुबसूरती और रूप ऐसी नाजुक चीज है तो इसका मर्म और रहस्य जान लेना सहज नहीं है॥

तीजरी मद्द रूपवानों की प्राकृतिक सौन्दर्य है जो अखण्ड पुण्यवान् कोई ऐसे भाग्यवान् हैं जिनको ऐसा रूप मिलता है जिसमें बनावट और संस्कार की कभी आवश्यकता ही नहीं पड़ती। जिनकी रूपमाधुरी देखते ही चित्त उधर खिंच जाता है ऐसों को अपना बाहरी रूप बनाने और सजाने में ऐसा यत्न और फिकिर नहीं रहती जैसा आभ्यन्तरिक चरित्र निर्दोष और बेदाग़ रखने में होती है॥

प्रिय पाठक! सौन्दर्य से हमारा प्रयोजन बाहरी रूप-रंग के बनाने से नहीं है जिसकी दुर्दशा हमने आप को कह सुनाया। वरन सौदर्य और रूप से हमारा प्रयोजन चरित्र अथवा शील पालन से है; क्योंकि शारीरिक सौंन्दर्य पहले तो सब को मिलता नहीं और न यत्न किये पर भी कोई उसे पा सकता है तो हम दूसरे ही प्रकार के सौन्दर्य के लिये प्रयत्न औंर चेष्टा क्यों न करें जो थोड़ी

सावधानी और फिकिर करने से सुलभ है। और न इस सौन्दर्य के बढ़ाने की कोई अवधि है जहाँ तक बढ़ाते जाइये कभी आप यह नहीं कह सकते कि हमारे और अधिक अच्छे होने की अब और गुन्जाइश नहीं है। एक अद्भुत बात इसमें और है कि जो इस सौन्दर्य में बढ़े हुये हैं वे अपने को कुरूप ही मानते हैं अर्थात् जो शील पालन में खरे-पूरे हैं और सकल सद्गुणालंकृत हैं वे यही मानते हैं कि मेरे में लाखों ऐगुण हैं इसी से दूसरों का ऐगुण देखने या कहने में वे सदा संकुचित रहते हैं।

एकअनोखी बात इसमें और भी है कि हम अपना बाहरी सौन्दर्य या रूप दूसरों के लुभाने को बनाते हैं जब हमारे रूपवान होने की दूसरा मनुष्य प्रशंसा करे तब मानो हमारे सौन्दर्य का सार्टीफिकेट हमें मिला। पर इस अभ्यन्तरिक सौन्दर्य को किसी की सार्टीफिकेट की कोई जरूरत नहीं रहती यह भी हम दिखा चुके हैं कि बाहरी सौन्दर्य बढ़ाने या उसे कायम रखने के कितने खटराग हैं पर आभ्यन्तरिक सौन्दर्य के बढ़ाने में किसी तरह का खटराग नहीं है न इसका दृढ़ और यावज्जीव चिरस्थायी रखना बड़ा दुष्कर है। बल्कि कठिन से कठिन तपस्या इसी चित्त-वृत्ति के बिमल और स्वच्छ रखने की एक रास्ता है। तब हे हमारे रसिक पाठक वृन्द ! निष्फल शारीरिक सौन्दर्य के पीछे यत्न करना छोड़ सुलभ चित्त-वृत्ति को सुन्दर करने में तत्पर हो, इसी से आप संसार भर को प्रसन्न रख सकोगे और अखण्ड आनन्द से पूर्ण रह प्राणीमात्र के बड़े उपकार के होगे ॥

मई १८९८

# (८) जवानी की उमंगें

मनुष्य के जीवन में जवानी की उमर एक बड़ी बरकत है। फूल जैसे जब तक कली के रूप में हो बन्द रहता है डाल और पत्तों की आड़ में मुंदा हुआ न जाने किस कोने में पड़ा रहता है। खिलने के साथ ही अपनी सुवास सौन्दर्य और सोहावनापन से सबों के नेत्र और मन मधुप को अपनी ओर खींच लाता है किसी तरह छिपाये नहीं छिप सकता। कली होने पर वह किस उठान से उठा था क्या क्या उसमें गुन-ऐगुन थे खिलने के साथही सब एक बारगी खुल पड़ते हैं; आगे को अब उससे क्या-क्या उम्मेद है सो भी उसका इस समय का विकाश प्रगट कर देता है। उसकी इसी बात को हम उमंग इस नाम से पुकारते हैं जो हमारी भविष्य आशाबन्ध को मजबूत या ढीला करता है। "आत्मानं नावमन्येत" मनु की इस आशा के अनुसार उन्नतमना ऊँची तबियत वालों में वह उमंग सदा ऊपर को उठने के लिये होती है; जघन्य निकृष्ट मलिन संस्कार, मैली तबियत के लोगों में पहले तो उमंग होती ही नहीं हुई भी तो सदा नीचे गिरने की ओर होती है—

नवयुवकों में ऊँची उमङ्ग देख आशालता लहलहाती हुई नित्य दृढ़ होती जाती है; उन में उस उमङ्ग का अभाव या उसे नीचे के ओर जाते हुये पाय आशालता सूख कर मुरझाती हुई ढ़ीली पड़ जाती है। हम उत्तम श्रेणी में दाख़िल हों इस के लिये यत्न करना किसी खास एक आदमी के हिस्से में नहीं आ पड़ा वरन हर एक आदमी को इसकी कोशिश करना मनुष्य जीवन की सफलता और मुख्य

काम है । वह नौजवान जो ऊपर को नहीं देखता निश्चय है नीचे को ताकैगा; तीर चलाने वाला जो अपनी वाण-विद्या से आकाश को वेध डालना चाहता है उसके तीर का निशाना कहाँ तक ऊँचे से ऊँचे पेड़ के ऊपर तक न जायगा। जिसके ऊँचे से ऊँचे खयाल हैं या जिसका ऊँचे से ऊँचे बर्ताव का क्रम है वह कहाँ तक अपने खयाल और बर्ताव में उससे बेहतर न होगा जिसमें उन बातों का अंकुर भी नहीं है । बोल-चाल और काम में कपट या कुटिलाई का अभाव मनुष्य में चरित्र पालन का पीठ की रीढ़ के समान सहारा है और सचाई पर दृढ़ता तो मानो चरित्र का मुख्य अंग है। इसलिये ऊँची उमङ्ग वाले युवक जनों को चरित्र पालन के इन दो प्रधान साधनों को दृढ़ता के साथ पकड़े रहना चाहिये। दूसरा बड़ा दोष नव-जवानों में बनावट (Assumption) का है जैसे बाज़ कीड़े न जाने कहाँ से पैदा हो फूल को विकाश के पहले ही जब वह कली रहता है तभी उसे नष्ट कर डालते हैं; वैसा ही इस बनावट का अंकुर नवयुवकों में तारुण्य के विकाश के पहले स्थान कर लेता है। हज़ारों लाखों नौजवान इस तराश खराश बनावट सजावट के पेच में पड़ दुर्व्यसनी हो बीस या पचीस वर्षकी उमर के पहुँचने के पहले ही लोहे तांबे उतर चुकते हैं; जो समय उनके पूर्ण विकाश का है उसमें जरा जर्जरित हो जाते हैं। गाल चुचक गया, पीले पड़ गए, कमर झुक गई, सच है—

जो न होइहै बीस पचीसा सो का होइहै तीसा ।

इसलिये नई उमङ्ग वालों को इस बनावट कृमिसे अपनेको बचाने की बड़ी चौकसी रखना उचित है—किसी बुद्धिमान् गंभीराशय का कथन है "Always endeavour to the really what you would wish to appear" हमेशा इस बात की कोशिश करते रहो कि तुम लोगों में अपने को वैसा

हो जाहिर करो जैसा तुम वास्तव में भीतर से हो। नुमाइश नौजवान में आना उमर का तक़ाज़ा और उसकी नई-नई उमंगों का एक अंग समझा जाता है पर उसका न आना बहुत बड़ा सौभाग्य समझना चाहिये। जाहिर दारी या नुमाइश न रख जो उमंग उठती हैं वह उसके भविष्य जीवन में महोपकारी हो उसको (Great man) महापुरुष बनाने में सहकारी होती हैं। धीरे-धीरे चुपचाप वह अपने महत्व की आलीशान इमारत लगातार बनाता जाता है। शरत् कालीन कुआर कातिक में जो बादल आते हैं वे गरजते इतना नहीं पर बरस के वसुधा को सब ओर से जल मग्न कर देते हैं। वैसे ही ओले छिछोरे भड़क तो बहुत दिखलाते हैं पर करतूत बहुत कम उनमें देखी जाती है; किन्तु जो गुरुता संपन्न होते हैं वे मुख से कुछ नहीं कहते पर परिणाम से उन के फलों का अनुमान कर लिया जाता है—

फलानुमेयाः प्रारम्भाः संस्काराः प्राक्तनाइव ।
"करतूती कहिदत आपनहिं कहिये साँई"

और भी—

गरजति शरदि न वर्षति, वर्षति वर्षासु निःस्वनो मेघः ।
नीचो वदति न कुरुते, न वदति सुजनः करोत्यवश्यम ॥

नौजवानी की उठती उमर ऐसे अल्हड़पन की होती है कि इस उमर में (Prceaution) दूरन्देश या पूर्वावधान बिल्कुल नहीं रहता बुरी आदतें एक-एक कर पड़ती जाती हैं। जिस समय उन खराब आदतों का आना आरम्भ होता है कुछ नहीं मालूम होता, जैसे पहाड़ों पर जब बर्फ़ गिरने लगता है कभी किसी के ध्यान में नहीं आता पीछे थोड़ा-थोड़ा कर जमा होते होते वही (Avalanche) हिम संहति हो जाती है तब सूरज का तेज गरमी भी उसे नहीं टिघला सकती। इसी तरह अल्हड़पन

की उमंग में खराब आदतें जब आना शुरू होती है बहुत उसपर ध्यान नहीं जाता पीछे वही इतनी दृढ़ और बद्ध मूल हो जाती हैं कि आमरणान्त जन्म भर के लिये दामनगीर हो जाती हैं और हज़ार-हज़ार उपाय उनके हटाने की की जाती हैं कोई कारगर नहीं होतीं। इससे गदह पचीसी का जब तक यह नाज़ुक वख्त गुज़र न जाय तब तक बड़ी सावधानी रखनी चाहिये। इस नाज़ुक वख्त में जो भलाई का बीज नहीं बोया जाता तो बुराई आप से आप आजाती है; जैसे खेत धरती बहुत फलवन्त और उर्वरा है जोता बोया न जाय तो लम्बी-लम्बी घास उसमें खुद बखुद उपज आती हैं :—

Vice quickly springs unless we goodness sow;
Rankest weeds in richest garden grow.

बुद्धिमानों का सिद्धांत है आदत या वान पड़ते-पड़ते पीछे दृढ़ और बद्ध मूल हो स्वाभाव हो जाती है मानो मा के पेट से वह वैसाही पैदा हुआ है। यूरोप के एक दार्शनिक का मत है कि मनुष्य पाप या पुण्य आदि जो कुछ करता है वह सब उसकी वैसी वान पड़ जाने का नतीजा है। खुलासा यह कि स्वभाव से बहुत कम काम होते हैं जो कुछ किया जाता है वह सब आदत है।।तो आदमी क्या है मानो जुदी-जुदी तरह की आदतों का एक गट्ठर है। इसी से यह कहावत चल पड़ी है 'आदत दूसरे तरह का एक स्वभाव है' (Habit is a second nature) इस कहावत का सबूत यों है कि धैर्य गाम्भीर्य विचार संयम आप की आदतों में दाखिल हो जाय तो छिछोरा पन टुचापन साहस आदि से आप को चिढ़ हो जायगी। ऐसे ही जो ओछी छिछोरी आदत का है उस को संयमी, विचारवान् गंभीराशय काहे को भले लगेंगे—एवम् चुगली-चबाव हेरफेर कुटिलाई जिसकी आदत में दाखिल हो जाते हैं उसको चैन नहीं पड़ती

वरन अन्न नहीं पचता जब तक किसी का कुछ चवाव या किसी की चुगली अथवा हेर फेर की कोई एक बात न करले। तो नवयुवक को सावधान रहना चाहिये कि ये बुरी आदतें अपने में क़दम न जमाने पावें नहीं जन्म भर छुटाये न छुटैंगी।

ये सब गुन-ऐगुन जिन्हें हमने ऊपर कहा प्रतिक्षण बड़े ज़ोर से साथ बढ़ते हुये आदमी के चरित्र को शोभित करते हैं या उसे दगीला कर डालते हैं। जिससे हम अपने में चरित्र पालन की शेष बातों को भी नहीं बचाय सकते। जो सुफ़ैद कपड़ा पहने हुये है कपड़ों के मले होने के भय से जहाँ-तहाँ बैठते सकुचता है; जो मैला कपड़ा पहने हुये हैं उसे क्या जहाँ चाहे वहाँ जा सकता है—

"यथा हि मलिनैर्वस्त्रैर्यत्रतत्रोपविश्यते।
एव चलितवृत्तस्तु वृत्तशेष न रक्षति"॥

जैसे उँजाला छोटे से छिद्र से भीतर प्रवेश कर अन्धकार को दूर हटा देता है वैसी ही आत्मगौरव का अणुमात्र भी ख़याल मनुष्यों को बुराई या बुरी आदतों की ओर से अलग करता है; जिनके आँख का पानी ढरक गया शरम और हिजाब का धो बैठे उन्हें नीचे से नीचे काम करने में संकोच नहीं रहता। नौजवानों में इसके नमूने बहुत से पाये जाते हैं। नई उमङ्ग में बहुधा नौजवान आत्मगौरव का ध्यान न रख बड़ों की बड़ाई रखने में चूक जाते हैं जिससे संसार में बदनाम ही अशालीन और धृष्ट की उपाधि पाते हैं। इसलिये उनको बड़ों को बड़ाई रखना मानो अपना बड़प्पन बढ़ाना है इत्यादि उन के उमङ्ग की हम ने यहाँ पर कुछ थोड़ी सी समालोचना कर इस लेख को समाप्त कर अपने पढ़ने वालों के सामने उपहार की भाँति दूसरा विषय रखते हैं।

जनवरी १६०१

# (६) कौश्रापरी और आशिकतन

आज हमारे पंचमहाराज गोपियों में कन्हैया के परतो पर कौश्रापरियों के बीच आशिक़तन बनने की ख्वाहिश मन में ठान भोर ही को घर से चल खड़े हुये—

मन लगा गधी से तो परी क्या चीज़ है

यह मत समझो हमारे पंचमहाराज आशिकतनी में किसी से पीछे हटे हुये हैं घर में चाहे भूँजी भाँग न हो दिल दिमाग तो सात ताड़ की ऊँचाई से भी अधिक ऊँचा है। नेउले का सा मुँह सूरत में साक्षात् छाया सुत, किन्तु सौन्दर्य और हुस्न में कोटि कन्दर्प लजावन तरहदारी में मटियाबुर्ज के नौवाव किस हकीकत में। अबे ओ खड्डेदार चुज्जे ! क्या तुझे भी आशिकतन बनने का हौसिला चर्राया क्या ? सूरत लंगूर मगर दुम की कसर है। दुम न हो दुमदार सितारे की नोच कर लगा दूँ। अरे ओ बीचुड्डो ! अञ्जनगिरि पर्वत की श्यामता का अनुहार करने वाले तुम्हारे अङ्ग-प्रत्यङ्ग की छवि पर तन मन सब वारे ये मुफलिस कल्लांच होकर भी आशिकतनों में नाम लिखाये तुम्हारे पीछे खराब खस्ता हैं, तुम्हारे लिये वेकल हैं। इश्क के फन्दे में गिरफ़्तार बेबस हैं, असीर हैं। बेकल इतने कि कलकत्ता की कौन कहे कालापानी छान आने पर भी तुम उन्हें अपना दासानुदास चरण सेवक कर लेने को राजी हो तो उन्हें कोई उज्र नहीं है। अब तो इस कूचे में पाँव रख चुके। आशिकों की फिहरिश्त में नाम दर्ज होगया। लोकनिन्दा और वदनामी को कहाँ तक डरैं। ओखली में सिर दै मूसलों की धमक से कहाँ कोई बच सकता है। शरम को शहद

समझ चाट बैठे। बिना बेहयाई का जामा पहिने आशिक के तन-जेब नहीं—

गाढ़े इश्क़ के हैं हम आशिक़।
तेरी जुदाई मे मल मल के हाँथ रहते हैं॥

हाय मेरी कौआपरी—कौआपरी—कौआपरी—अफसोस जर दिया जनानों को पास माल न हुआ नहीं तो कौआपरियों की पलटन खड़ी कर हम उसके कपतान बनते या तो शाह वाजिद-अली किसी ज़माने में हुये थे या अब हमीं इस वख्त देख पड़ते। अच्छा तो क्या बिलाई के भैंस लगती है क़िसी मालदार को चल कर फँसावैं। ओ हो! आप हैं—पण्डितअमुक! अमुक! अमुक! बाबू फलां! फलां! फलां! मिस्टर सो ऐण्ड सो! सो ऐण्ड सो! लाला साहब वगैरह! वगैरह! ओः खोः! आप क्या हैं—बला हैं! करिश्मां हैं! तिलिस्मां हैं! फिनामिना है! आश्चर्य और अद्भुत तथा लोकोत्तर वस्तु का सन्दोह हैं। उठती उमर और जगजाती जवानी के जोश के उफान में बीबी लेकगोहिना के नवासे हैं।

चुलबुल चालाक चतुर चरपर छिन छिन में होत।
छैले छबीले छिछोरे और छोर के॥

क्या कहना आप ही तो हैं! भला यह तो कहिये आपने कितने कण्टाप और पदाघात के पश्चात् पदाधिरूढ़ हो अनङ्ग अखड़े की पहलवानी प्राप्त की:—

सदा शठः शठापालं मल्लो मल्लाय शद्यति'

सींक से पतले आप के भुजदण्ड आप की पहलवानी की गवाही दे रहे हैं। मुरछल आप हाथ में क्यों लिये रहते हैं? नहीं नहीं यह तो नीम की टेहनी है। क्या कौआपरियों में नवधाभक्ति के साधन का योग सिद्ध हो गया?

स्मरणं कीर्तनं विष्णोरर्चनं पादसेवनम्

धनुषाकार कमान सी झुकी हुई कमर से भी बोध होता है आप की तपस्या सिद्ध होगई महाप्रसाद पाय गये—

लब्धाणामङ्द्मेंकन्तु धूम्रपानमधोमुखी ।
उमेति मात्रा तपसो निषिद्धा पश्चादुमाख्यां सुमुखी जगाम ॥

सुमुखी नहीं सुमुखो कहिये—सुमुख, दुर्मुख, कृष्णमुख, घोड़मुख, लोखरीमुख, बीघमुख, मुख के जितन विशेषण जोड़ते जाइये हम सब का एक-एक उदाहरण आपको देते जाँयगे । गरज कि पञ्चमहाराज आशिकतनी के महकमें को नीचे तक टटोल इसे अथाह और वे ओर-छोर पाय ऊब गये और निश्चय किया कि इन कौआपारियों के फन्दे में पड़ तन और धन दोनों का तहस-नहस है। ईश्वर शत्रु को भी इनसे बचाये रक्खे यही सब सोचते-विचारते घर लौटे ।

अप्रैल १८९८

# (१०) रुचना या पसन्द

रुचना या रूचि मनुष्य मात्र को अलग-अलग होती है इसी से कवि शिरोमणि कालिदास ने लिखा है।

भिन्न रुचिर्हिलोकः

जिस तरह या जिस बात से आदमी अपने मन के हवस की दधकती आग को बुझा सकता है उसी को रुचि या पसन्द कहते हैं। संसार के यावत् विषय हैं सबमें सब की पसन्द कभी एक सी नहीं रहती। देखा जाता है एक ही बाप के दो लड़के हैं रूप-रंग डील-डौल में दोनों एक से हैं पर पसन्द दोनों की कभी को इतनी अलग-अलग होती है, कि एक ईरघाट तो दूसरा मीरघाट। भिन्न रुचि पुनर्जन्म के सिद्ध करने का बड़ा भारी द्वार है। हम लोगों का अवश्य कुछ पहले का ऐसा भारी लगाव रहता है जिसे संस्कार कहेंगे कि वह हमे एक तरह की रुचि का नहीं करने देता। कितने लोग इस भिन्न रुचि का कारण सत्संग दु:संग या दशा परिवर्तन कहते हैं पर तले तक डूब के देखिये तो उस तरह का संग या दशा परिवतन क्यों हुआ उसी पूर्व संस्कार की प्रेरणा से। खैर, यह तो दार्शनिकों के झगड़े और ऊहा-पोह हैं। प्रकृत मनुसरामः हमारी रुचि अधिक तर खाने पीने पहनने-ओढ़ने, सवारी-शिकारी, सङ्गत-सोहबत में देखी जाती है जिनकी ओर मनुष्य का मन सहस्रों स्रोत से इतना अधिक वेग से दौड़ता फिरता है जिसका रोकना आदमी की ताकत के बाहर है। इसीलिये आध्यात्मिक विचारशील महात्माओं ने यही सिद्धान्त कर रक्खा है कि संकल्प विकल्पात्मक इस मन ही

को मार डालना चाहिये तब पसन्द या रुचि तो उस मन की एक महा मुग्ध दशा है जिसे कब उसमें ठहरने का अवकाश मिल सकता है।

अंगरेज़ी राज्य और अंगरेज़ी शिक्षा के प्रभाव से हमारे देश में अब उसी पसन्द के दो खण्ड हो गये हैं एक पुरानी अर्थात् निरी हिन्दुस्तानी दूसरी नई अर्थात् अङ्गरेज़ी पसन्द। यह तो सदा का एक अटल नियम चला आया है कि राजा की झुकावट जिस ओर को होगी प्रजा भी उसी ओर को मुड़ जायगी और इस अङ्गरेज़ी पसन्द के बारे में तो कहनाही क्या है। आज दिन सब भाँत दैव इन पर सानकूल है तब अङ्गरेज़ी पसन्द केवल हिन्दुस्तान ही मात्र की क्या बरन दुनिया भर की रुचि के अनुकूल हो सकती है विलाइत के वणिक् और सौदागरों के भाग्य की उत्कर्षता है। देशी चीज़ें बेकदर क्यों हुई इस लिये कि उनमें नुमाइश नहीं है। हमारे साहब लोग टाट महा खुर खुरा कपड़ा पहनें तौ भी वह पसन्द के लायक है क्योंकि उस में नित्य नई तरह की नुमाइश का दखल रहता है। उसी के न होने से हमारी देशी चीज़ें अङ्गरेज़ी कारीगरी के मुकाबिले भद्दी मोटी और महँगी जचती हैं। बाबा खरीदैं पोते बरतैं इस किफायत को सूमपन और दरिद्रता के अनेक कारणों में झोंक दीजिये। विलाइत की बनी चीज़ोंकी नुमाइश सुबुकपन और आशाइस पर ध्यान दीजिये। एकही चीज़ को एक बार महँगी से महगी खरीद जन्म पर्यन्त उसी को लिये सती होते रहे तो नई ईजाद और नई तरक्की फिर कहाँ रहा। अस्तु, जो हो अङ्गरेज़ी सभ्यता की पसन्द जिस ढर्रे पर ढुलक रही है उस में एक प्रकार का अद्भुत कड़ापन काकश्य और रूखापन है जिसे हम अपनी हिन्दुस्तानी पसन्द के साथ मिलाते हैं तो आकाश और पाताल का अन्तर पाया जाता है। और सब छोड़ पहले पोशाक लीजिये माना कि हमारे साहब

लोग अति शीतल देश के रहने वाले हैं इस लिये उन्हें भारी और अधिक कपड़ों की ज़रूरत है। रूई और पशमोनों के चिकने और नफीस कपड़ों की ईजाद हो गई और होती जाती है किन्तु साहब लोगों को टाट और ज़ीन ही पसन्द आता है सो क्यों? इसलिये कि इन दोनों की बुनावट में जैसी कड़ाई और खर-खरापन है वह हमारे हुज़ूर लोगों के मिज़ाज के साथ जोड़ खाता है और जैसा आराम उस में उन्हें मिलता है वैसा बयालिस आँक की तनज़ेब अद्धी और आबरवाँ में काहे को मिलने वाला है। अस्तु, हमारे साहब लोग ठंढे देश के निवासी हैं इतना मोटा कसा और खरखरा कपड़ा उन्हें ज़ेब देता है। खून लगाय शहीदी में दाखिल होने वाले हिन्दुस्तानियों को जो ऐसे कपड़े पसन्द आते जाते हैं सो इसी लिये जिसमें रिवाज वक्त (Fassion of the day) में फ़र्क नहीं पड़ता। यह तो कपड़ों के बारे में हुआ, ऐसाही तेल, केश-शृङ्गार सिरके वालो की काट छाट, या बदन में लगाने की वस्तु साबुन और लवेंडर आदि सुगन्धि द्रव्य, अङ्गरेज़ी पसन्द वालों ने निहायत उमदा खुशबू मान रक्खा है जिन्हें देख कर भी शायद हिन्दुस्तानी पसन्द वालों को घिन होगी और उनका कड़ापन उन्हें पसन्द न आवैगा न उन्हें बरदाश्त होगा। खैर, चुरट की करीह और कड़ी दुगन्धि को अलग रखिये।

### नाम बड़ा दरसन थोड़ा

आपकी गोलडेनलीफ तमाखू हमारी घटिया से घटिया तमाखू जिसे देश के गरीब काम में लाते हैं सो भी गोलडेन लीफ से कितना कम कड़ी है। यहाँ पर पसंद ना पसंद का (Standard) सूत्र हम स्त्रियों को मानते हैं जिनकी रुचि अङ्गरेज़ी पसन्द की झुकने की कौन कहे सर्वथा उसके विरुद्ध है जिसका कारण भी यही माना जायगा कि उनकी कर्कशता वे बरदाश्त नहीं कर

सकतीं। ऐसाही ललनाओं ने अपने लिये जो मण्डन सामग्री मान रक्खा है उसे पसन्दीदा कहने में हम समझते हैं किसी को उज्र न होगा।

हम अपने में से अपनापन कहाँ तक खो बहाया इसका यह एक बड़ा पक्का सुबूत है कि चाहे जितना खर्च हो और उष्ण देश के रहने वाले होने से अति शीतल देश के पहनाव और खुशबू आदि में हमें वैसा आराम भी चाहो न मिलै किन्तु बिलाइत में उसका प्रादुर्भाव हुआ है और लण्डन, मेनचेष्टर, पेरिस, डबलिन आदि नगरों की उस पर मुहर है तो वह सर्वथा हमारी रुचि के अनुकूल होना ही चाहिये। वही हमारे प्रभुवरो में इसके विरुद्ध देखा जाता है हजारों साहब लोग हिन्दुस्तान में ऐसे हैं कि उन्हें बीसों वर्ष यहाँ रहते बीत गया पर यहाँ का पानी नहीं अब तक पिया, चाहे जो खर्च हो बोतलों में भर-भर बिलाइत का पानी आता है वही वे पीते हैं इसका नाम जन्मभूमि वात्सल्य है। बहुत से साहब लोग हमारे पसन्द चीजें काम में भी लाते हैं ता चोरी छीपा खुला-खुली उनको न वर्तने का कारण कदाचित् यह है कि वे चीजें नेटिव के पसन्द की हैं। नेटिवों के बर्ताव की चीजों को खुला-खुली अपने काम में लाना इससे बढ़ कर उनके वास्ते और क्या बेइज्जती हो सकती है। मामूली खानपान की चीजों को अलग कर उनके तौर्यत्रिक अर्थात् नृत्य, गीत, वाद्य को लो जये तो उस पर ख्याल कर जी कुढ़ता है। नाच उनका ठीक बन्दरों की-सी उछल-कूद है। संगीत में हमारे यहाँ के गान की सुघराई अंगरेजी गान में एक भी नहीं है। जो इनके यहाँ के वाद्य यंत्रों पर ठीक-ठीक उतर सकैं। इन के यहाँ सिवाय सात स्वरों के उतार चढ़ाव से बढ़कर स्वरों की कोई दूसरी खूबसूरती हुई नहीं। लय और तालों की अत्यन्त सूक्ष्मता जो यहाँ के स्वरों में है विलाइत के बड़े-बड़े गान विद्या प्रवीणों की कभी स्वप्न में न

सूझैगी। ऐसाही वास्तु विद्या इमारतों की पल्ले दरजे की बारीकी और मज़बूती यहाँ हो है इनके यहाँ के बेजोड़ मकानों की बारीकी तथा मज़बूती देख दुख होता है कि क्यों हुनर म्यामारी पर तलवार चलाई गई। इतनी अपूर्णता पर भी। ये बुद्धिमान और सभ्यता की नाक हैं। सब तरह के गुणों में पूर्णता होने पर भी हम गंवार असभ्य और मूर्ख बने हैं समय पड़े की बात है सच है:—

प्रतिकूलतामुपगतेहि विधौ विफलत्वमेति बहु साधनता।
अवलम्बनाय दिनभर्तुरभून्नपतिष्यतः कर सहस्रमपि॥

अगस्त १८६६

# (११) सुगृहिणी

पण्डितों ने अपनी पोथियों में स्त्रियों को हर तरह पर घटाया है "स्त्रियां बड़ी बेईमान होती हैं कपट की कठपुतली हैं हृदय इन का छूरे की धार के समान होता है बुद्धिमान् इनका विश्वास कभी न करै इत्यादि-इत्यादि।" चञ्चला, अबला, प्रबला, भीरु, आदि विशेषण इनके नामों के आगे लगाय जहाँ तक निन्दा करते बन पड़ा करते गये उनके यावत् गुणों को मटियामेट कर पुरुषों को उनके मुकाबिले सिरताज किया और स्त्रियों को सिवा लौंडी और दासी बनाय रखने के उन्हें किसी काम ही की न रक्खा अपने आधीन रख सब तरह का अत्याचार और जुल्म उन पर करना रवा और उचित समझा। हम इन पण्डितों को कैसे समझाव कि आप लोग भूल में पड़े हो जिन्हें आप चञ्चला, भीरु और अविश्वास के योग्य मान बैठे हो वे आपके घर की शोभा है संसार की सार पदार्थ हैं। दारुण घोर विपत्ति और अनर्थ जिनमें पड़ मर्द पस्तहिम्मत और किंकर्त्तव्यतामूढ हो जाता है और अपने को मिट्टी में मिला मान लेता है उनमें स्त्रियाँ हतोत्साह न हो निःशंक स्थिर चित रह बड़े-बड़े दुःख और मुसीबतों के झकोर को सहती हुई घर के प्राणियों को दिलासा हर तरह पर सहारा और आराम पहुँचाती हैं। जिस कसौटी में कसे जाने पर पुरुष फिसल कर भरे मुँह गिरता है उसमें ललना जन नेकचलनी का नमूना दिखलाते हुये पर्वत की शिला सी रह अपने शुद्ध पवित्र चरित्र पर निर्भर हो बेदाग रहती हैं।

एक बार एक बड़े पुराने दोस्त से भेट हुई। आशीष-प्रणाम और मामूली बातचीत के उपरान्त दोस्त ने कहा—भाई, तुम बड़े

भाग्यवान् हो गृहस्थी न रख बहुत तरह की फिक्र और तरद्दद से बचे हो। हम लोगों के लिये घरगृहस्थी भी बड़ी झौझट है उनका जीवन धन्य है जो निहंग लाड़िले नोन तेल लकड़ी की चिन्ता से वरी हैं।

मित्र जी का उदास और मुतरद्दिद चेहरा देख उनके साथ हमदरदी तो मुझे जरूर हुई किन्तु कुछ तो चुहल के ख्याल से और कुछ दोस्त साहब को बेवकूफ समझ उन्हें बनाने की नीयत से मैंने कहा आप क्यों उदास और फिक्रिमन्द हो रहे हो ? क्या हमारी भाभी साहबा आपको खिदमत से इनकार करता हैं ? आप तो लड़के-वाले वाले हो बाहर कैसा ही तरद्दुद और फिकिर में डूबे हो घर पहुँच छोटे-छोटे बच्चों की तोतरी मीठी बोली सुनते ही कलेजा दह हो जाता है सब चिन्ता और फिकिर भूल जाती है। मन कैसा ही उदास हो घर वाली ने एक बार मुसकिरा कर प्रेम पूर्वक कटाक्ष से देख दिया मानो जन्म सफल हो गया स्वर्ग-सुख तुच्छ और फीका मालूम होने लगता है। इसी मतलब से गृहस्थी की जाती है कि घर के सब लोग मिलकर उस बोझ को हल्का किये रहैं जिसका उठाना एक आदमी के लिये बड़ा मुशकिल है। इस तरह पर अपने दोस्त को मैं देर तक टटोलता रहा पर उनकी उदासी का सबब न खुला। बड़ी देर के बाद अन्त को कुछ ऐसा उन्होंने जाहिर किया कि मित्रजी को रोजगार करने का हौसला चर्राया तो कलकत्ते में जाय दो टकिया चौट किया. गवर्नमेंट पेपर का व्यौपार करने लगे, दोस्त साहब को रुपया पैदा करने की हवस तो बढ़ी ही थी इतना अक्लि न जोर कर सकी कि यह व्यौपार बिल्कुल जुआ है लग गया तो तीर तुक्का। लख-पती को भी बनते बिगड़ते देर नहीं लगती तो अल्प धन वाले जैसे हमारे मित्र किस गिनती में थे। प्रारंभ में दो-एक बार थोड़े दिन तक सर सब्ज रहे कलकत्ते के बाबूओं का साथ पाय

मिज़ाज़ बदल गया बाबूपने की अमीरी ने उसमें जगह कर लया मन मानता गुलजरें उड़ने लगे बालू की भीत सा ओछी पूँजी का व्योपार कब तक चल सकता है उसमें कलकत्ते का खर्च। रुपया बहुत अधिक हो गया हो और लक्ष्मी किसी तरह हटाये न हटती हों तो कलकत्ता या बम्बई में चला जाय और वहां अमीरी के ढँग पर रहने लगे बात की बात में रुपया पास से खसक जायगा और मालूम न होगा। हमारे दोस्त को कागज के रोज़गार में ऐसा धक्का लगा कि लेई पूँजी सब गँवाय बैठे कौड़ी-कौड़ी को मुहताज हो गये बाबूपने की बुलन्द शाहखर्ची की कौन कहे भूरी नोन रोटी को भी तरसने लगे। दोस्त साहब का तबारीख में इतना और याद रहे कि जिस समय ये कलकत्ते कमाई करने गये थे और लाखों का वारान्यारा इन के हाथ से हुआ उस समय बहती गंगा में हाथ धोने की भाँत कभी एक पैसे का सुलूक अपनी बीबी और लड़के तथा घर वालों के साथ इन्होंने न किया अब अपाहिज और लाचार हो उन्हीं लड़के और बीबी के गले पड़े। बीबी भी ऐसी नेकबख्त थी कि पिसना पीस-पीस जेवर बेच-बेच लड़कों को पाला। मसल है:—

"जैसा कन्था घर रहे वैसे रहे विदेश"

जब मियाँ ने लाख कमाये तब भी वैसे ही और अब भी जब उन्होंने लाख को खाक में मिलाय धूर फाकने लगे तब भी वैसे ही—मैं बड़ी देर तक पशोपेश में पड़ा रहा कि अब आगे इनका और भेद क्यों कर मिलै कुछ थोड़ा ठहर फिर मैंने पूछा कि क्या हमारी भावज को तुम्हारा यह सब हाल मालूम नहीं है।

मित्र जी ने कहा यही तो एक और मेरे दिल को बड़ा सदमा है जैसे किसी को भीतरी चोट पिराती तो है पर ऊपर कोई

उसका चिन्ह नहीं देख पड़ता। जब मैं खुशहाल था उस समय मेरा कुछ और ही ढंग था कभी गुमान था कि मैं इस हालत को पहुँचूँगा ? अब सिवाय बेहयाई इखतियार कर लेने के और क्या करूँ—आदमी के लिये मुफलिसी बड़ी बला है। सच है:—

"अहो निधनता सर्वापदामास्पदम्"

मैं फिर भी अपनी घरवाली की तारीफ करूँगा कि वह कभी मुझ से एक बात नहीं कहती बल्कि उलटा हमी को समझाती है कि तुम क्यों इतना उदास रहते हो गृहस्थी की चिन्ता मत करो भगवान् ने मुँह चीरा है तो खाने को दे हीगा तुम शरीरसे सुखी रहो तुम हो तो मेरे नथुना बिछिया की लाज बनी है। मेरा जीवन तो तुम्हीं से है जो कुछ जेवर बचे हैं ले जाओ फिर कोई रोजगार करो खर्च की तंगई मत सहो ईश्वर करेगा फिर सब कुछ हो जायगा आदमी की नीयत दुरस्त रहनी चाहिये जिनकी नीयत में फरक नहीं पड़ा उनक रखवाली भगवान् करता है।

मुझे ऐसा विश्वास न था कि स्त्रियों में ऐसी हमदर्दी होती मुझे अब निश्चय हो गया कि व्यर्थ ही लोग स्त्रियों को दोष देते हैं वास्तव में पुरुष की जाति बड़ी खुदगर्ज निठुर और निर्दय है अपने अपने आराम और फाइदे के लिये मर्दों ने औरतों को हर तरह पर बदनाम कर रक्खा है। इसके पहले मेरा भी यही ख्याल था और मैंने उसे बड़े-बड़े क्लेश दिये मैं समझता हूँ यह उसी का फल है कि मैंने इतने-इतने दुःख सहे खैर, अब तो आगे के लिये तोबाः करता हूँ कि कभी कोई ऐसी बात न करूँगा जो घरवाली के विरुद्ध हो। यह कह मित्र जी मुझ से विदा हुये और मैंने भी अपने घर की राह ली और यह सोचने लगा कि मित्र हमारे कम अकिल तो जरूर हैं पर स्त्री इनको बुद्धिमती और नेक मिली है। अपनी कम अकिली का फल ये पा चुके अब राह पर आ गये तो अवश्य अब इनकी ऐसी दशा न रहेगी। ऐसा

ही हुआ भी। मित्र ने थोड़ी ही पूंजी से रोजगार करना शुरु किया और कुछ दिन बाद इन का दुःख दरिद्र दूर हो गया साथ सुख और आराम के अपने दिन काटने लगे। सच है:—

सन्तुष्टो भार्यया भर्ता भर्त्रा भार्या तथैव च।
यस्मिन्नेव गृहे नित्यं कल्याणं तत्र वैध्रुवम्"—

जिस घर में भार्या से भर्ता और भर्ता से भार्या परस्पर प्रसन्न रहते हैं वहाँ सब सम्पदा सदा वास करती हैं।

जून १८६५

## (१२) चली सो चली

परमेश्वर की सृष्टि में कितनी ऐसी बातें हैं कि जो चली सो चली काहे का कभी रुक सकती हैं। सौ-सौ उपाय करो उनका वेग नहीं रुकता। जैसे कर्कशा लड़ाकिन स्त्रियों की ज़बान एक मुह में सौ-सौ गाली जीभ क्या कतरनी है, आँधी है, रेल की इंजिन है चली सो चली कौन ऐसा दैव का दूसरा पैदा हुआ है जिसके रोके रुक सकै। गाली से झोटिं झोटे की नौबत पहुँची, गटपट हो लड़ते-लड़ते लस्त हो गई पर ज़बान न रुकी बाहरे इस चलने का जोश। इसी तरह पर राँड़ का चरखा, कुंजड़िन भठियारिनों का मुह—बस चला सो चला किसके रोके रुकै। इस चलने को गिनते चलिये—सूरज चलता है, चाँद चलता है, पृथ्वी चलती है, ग्रह-उपग्रह नक्षत्र, तारागण को साथ लिये आसमान चलता है, दिन चला, रात चली, पचास वर्ष के हुये, उमर की उमर समाप्त हो गई, मुहबाये रह गये लोगों को खबर हुई बाँध-बाँधू चार जात भाइयों के कन्धे पर सवार हो चल बसे, राम नाम सत्य है, बस चले सो चले अब नहीं लौटैंगे।

आज हम चले कल तुम चले परसों किसी दूसरे की बारी आई इस चलने से कोई नहीं बचा कितना ही यत्न करो एक दिन सब को चलना है।

चलाचलमिदं सर्वं

कालचक्र की प्रेरणा से यह ज़माना ही चल रहा है आज और है कल कुछ और है। हुक्म चलता है। राजा का हुक्म चलता है। प्रजा का हुक्म चलता है। जोरू का हुक्म चलता है। लाट का हुक्म चलता है। कलट्टर का हुक्म चलता है। कोतवाल का

हुक्म चलता है। सफाई के जमादार का हुक्म चलता है। कहाँ तक गिनावें म्युनिसिपलिटी की कृपा से कूड़ा ढोने वाले मेहतर का हुक्म चलता है। हुमायूं बादशाह के ज़माने में एक शक्केने चाम की चकती चलाई थी इस अङ्गरेजी राज्यमें कागज का रुपया चलता है लाख रुपया मुट्ठी में दाब लो मालूम न हो। सब लोग जिसे गाड़ी कहते हैं सो भो चलती हैं। रसिक पढ़ने वालों को प्रसन्न करने को हमारी कलम चलती है। लम्पटों के आँख का इशारा चलता है। चोर और उचक्के का पराये माल पर मन चलता है। दलालों में बीच बाज़ार अद्धी-अद्धी के लिये पैजार चलता है। सूदखोर महाजनों का सूद चलता है दिन-दूना रात चौगुना सौ दिया दोसौ, का तमस्सुक लिखवा लिया एक ही वर्ष में दोसौ का चार सौ बात की बात में हो गया। कुलपुत्र सपूतं का नाम चलता है।

नाम काल नहिं खाय

टोडरमल टिकइत राय सरीखे न जाने कब हुये हैं जिस तीर्थ में देखो टिकइत राय का धर्मशाला तैयार है। शालिवाहन और विक्रम को किसने देखा है पर उनका शाका और संवत आज तक चला जाता है। कवि और शायरों के मस्तिष्क का परिणाम उनके-उनके काव्यों का प्रचार आचन्द्र तारक चलता है। इसी तरह पर साहूकार हुण्डी वालों की साख जो चली सो चली घर में चाहे भूँजी भाँग न हो चार महाजनों में साख बँध गई लाखों का भुगतान होता है साख चल पड़ी है हुण्डी पुरजा कहीं से नहीं रुकता। अन्धपरम्परा न्याय के अनुसार बाल्यविवाह इत्यादि कुरीतें जो चल पड़ी सो चल पड़ी किसके रोके रुक सकती हैं। इत्यादि, इस चल पड़ने के नमूने यहाँ पर थोड़े से दिखलाये गये।

इसी के विरुद्ध कितनी बातें ऐसी हैं जो अड़जाने के लिये

प्रसिद्ध हैं। कितनी ही फिकिर करो जौ भर इधर-उधर न हटैंगी। हमारे जैसा यहाँ परिवर्त्तन विमुखता पुरानीलीक की पैरवी कितना ही कोई समझावे हमारे पुराने खयाल वाले जो अड़े सो अड़े पुरानीलीक के बाहर न होंगे। हिन्दुस्तान में मँहगी और दुर्भिक्ष अड़ रहा है। भारत के साथ दुर्दैव विलाइत के साथ सौभाग्य और दिनदूनी रात-चौगुनी तरक्की अड़ रही है। हमारे ब्राह्मणों के साथ मुफ्तखोरी की आदत भिक्षुकी वृत्ति अड़ रही है इस भिक्षुकी ने ब्रह्मतेज इनमें न रहने दिया अपाहिज और अपावन इन्हें कर दिया पुरुषार्थ की कहीं गन्ध भी न रह गई तौ भी दक्षिणा की आशा ने इनका पिण्ड न छोड़ा:—

नित्यं प्रसारितकरो दक्षिणाशाप्रसाधकः।
न केवलमनेनैव दिवसोपि तनूकृतः॥
एष एव महान्दोषो शालेर्द्विजकरस्य च।
पुनर्वसुसमृद्धोपिं हस्तोदकमपेक्षते॥

बिलाइत के लोगों के साथ शूरता साहस और सूरमापन अड़ रहा है। हिन्दुस्तानियोंके साथ कादरता भीरुता अनुद्यम बड़ी मजबूती के साथ कदम जमाये अड़ रहा है। हमारे हुजूर लोगों में आजादी रोब और प्रभुता आय अड़ी हुई है। हमारे में हर तरह पर पराधीनता दास्यवृत्ति और सहनशीलता ने अपना अटल राज्य स्थापित कर लिया है। पराधीनता और सहनशीलता की बुनियाद हमारे में न जाने किस कुसाइत से पड़ी कि नस-नस को यह दाबबैठी कहीं से हमे उभड़ने ही नहीं देती। हम समझते हैं बचपन में जन्मघूँटी के साथ हमे पराधीनता का रस निचोड़ कर पिला दिया जाता है और बचपने ही से इस बात की ताकीद रहती है कि खबरदार आजादी के पास न खड़े होना इसका जहरीला असर तुम्हारे में आजायगा तो खराब जाओगे समाज सम्बन्धी धर्म-सम्बन्धी स्वाधीनता को अवकाश टिक जाने के

लिये मिल जायगा अन्त को यह बुरा अभ्यास पड़ते-पड़ते राज-कीय विषयों में भी तुम आज़ाद होने की ख्वाहिश ज़ाहिर करने लगोगे। ये सब तुम्हारे कुलक्षण भारतदुर्दैव से नहीं देखे जाते इसी लिये उसने अपनी सहचरी पराधीनता को तुम्हारे पास भेज दिया और यहाँ आय अड़ गई। इस तरह पर थोड़ा-सा नमूना अड़ जाने का दिखलाया गया। साराँश यह कि इस चलने और अड़ जाने के बीच में पड़ इङ्गलैंड सौभाग्य की सीमा का उल्लंघन किये हुये तरक्की करता जाता है हिन्दुस्तान उसी चलने और अड़ जाने के पेच में पड़ा हुआ नीचे को गिरता हुआ रसातल रसीदा होता जाता है।

जनवरी १८६८

## (१३) चलन

चलन—बाजार—न पैसा घाट न पैसा बाढ़—चोखा माल चोखा दाम—मोल तोल का क्या काम। चलन—सिक्के की—बादशाह हुमायूँ के वक्त में सिक्के ने चाम की चकती चला दिया था।

चलन—हुण्डी की—दरसनी देखते ही रुपया गिन दो नहीं दिवाला। जिनकी हुण्डी में बट्टा उनकी बात में बट्टा। मुद्दती है, मिती पुजने पर चुकतो न हुई डिगमिगाने—तकाजेपर तकाजा एक, दो, तीन—बंबोल गये साख गई टके को कोई नहीं पूछता कौड़ी के तीन-तीन।

चलन—भलमनसाहत की—बात के धनी—

प्राण जाहि वरु बचन न जाहीं
"विदुषां वचनाद्वाचः सहसा यान्ति नो बहिः।
पातश्चेन्न पराञ्चन्ति द्विरदानां रदाइव।"

चलन—टुच्चों की—तुम से तुम्हारी सी उन से उन की सी। मुह में राम-राम पेट में कसाई का काम। ऐसा काटैं कि लहर न आवै।

अहो खलभुजङ्गस्य विचित्रीयं बधक्रमः।
अन्यस्य दशति श्रोत्रमन्यः प्राणैर्वियुज्यते॥

चलन—कुलाङ्गनाओं की—

गतागतकुतूहलं नयनयोरपांगावधिस्मितं—
कुलनतभ्रु वामधर एव विश्राम्यति।
वचः प्रियतमश्रुतेरतिथिरेव कोपक्रमः—
कदाचिदपि चेत्तदा मनसि केवलं मज्जति।

गङ्गा भी चाहती हैं कि सती, सावित्री, कुलवती कब आकर हमारे में नहाय, हमें पवित्र करेगी।

अपि मां पावयेत् साध्वी स्नात्वेतीच्छति जाह्नवी—

भारत में अभी बहुत ऐसी पड़ी हैं उन्हीं के पुण्य से देश थमा है।

चलन—व्यभिचारिणी कुलटाओं की।

मैं व्यभिचारिन जनम की, जरा अवस्था लीन।
तू दुलही कलिकाल की सुरसति दूती कौन॥
अतिविनयवामनतनुर्विलंघ्यते गेहदेहलीनवधूः।
अस्याः पुनरारभटी कुसुम्भवाटी विजानाति॥
एते वारिकणान् किरन्ति नाम्भोधराः।
शैलाः शाद्वलमुद्वहन्ति न सृजन्त्येते पुनर्नायकान्॥
त्रैलोक्ये तरवः फलानि सुवते नैवारभन्ते जनान्।
धातः कातर मालपामि कुलटा हेतोस्त्वया किं कृतम्॥
"सुखशय्यास्ताम्बूलं विश्रब्धालापचुम्बनादीनि।
गणयन्ति न लक्षांशं त्वरितक्षणचौर्यसुरतस्य॥"

ईश्वर इनके फन्दे से बचावे—

चलन—हिन्दुस्तान के बीर बांकुरे क्षत्रियों की।

क्षात्रधर्म की थाप। रखना अपना परताप।
चाहो आगे आवैं बाप। तबहू चाप खैंचना—

चलन—पुराने समय की महाजनी और पुराने समय के लेन देन की। केवल बात पर हज़ारों का लेन देन होता था न स्टैम्प का कुछ काम था न अदालत में कोई जाता था हाथ को हाथ पहचानता था। बाप करज़ा छोड़ जाता था तो बेटा उसको पहिले ऋण से उद्धार कर तब गया करता था। अब कानून ने कितनी हिन्दी की चिन्दी निकाल रक्खा है कि बिना अदालत गये करज़ा वसूल होता ही नहीं न लेने वाले की नीयत दुरुस्त न देने वाले की।

चलन—आज कल के अंगरेज़ी पढ़ों का चाहे दस रुपये पर भी उन्हें कोई न पूछे पर ठाठ बास कमती न रहे। मसल है:—

सोवैं भुसौले में सपना देखैं लाख टके का

चलन केरानी गीरी की। पिसना पीसते-पीसते सुबह से साँझ तक में दम मारने की फुरसत नहीं फिर भी काम की कसरत न मिटो। इञ्जिनड्राइवर तो इञ्जिन ठिकाने से पहुँचा, निश्चिन्त हो जाता है कुइलड्राइवर को बे फिकिरी कहाँ जवाब दिही प्रतिक्षण सिर पर सवार।

सेवा धर्मः परमगहनो योगिनामप्यगम्यः

चलन—हमारे हिन्दुस्तानी साहब लोगों की दिमाग परियों का शकल चुड़ैलों की।

दासस्य दासस्य च दासदासः

कूकर के चूकर चूकर के पेशकार।

शकल तामाखू के पिंडे की सी। ऐठन आतशबाजियों में जैसा मुर्रा। रहन-सहन बोल-चाल में मानो टटके अहल बिलाइती अभी जहाज से उतरे हैं। काली सूरत पर काला कोट बूट काला पतलून मुह में फलीता सिर पर हैट। मानो सिर पर झौआ औंधाये राजा इन्दर की सभा का कालादेव। रूप माधुरी पर कोटि कन्दर्प न्यौछावर हैं। लियाक़त में दूसरे लाटसाहब कुलीनता में सूर्य और चन्द्रमा के सदृश विमल और उज्ज्वल।

सन्ततिः शुद्धवंश्या हि परत्रेह च शर्मणे

चलन—हमारे ना दिहन्द मुफ्तखोरों की। बरसों तक पत्र पढ़ते रहे दाम देने के समय निबुआ नोन। ऐसे नराधम किस लिये जन्मे खेद है।

चलन—कुटिल कुढँग खलों में सरल सुपात्र सज्जन की।

जिमि दशनन बिच जीभ बिचारी

चलन—हमारी नख से सिख तक रुखाई का जामा पहने हुये। बहुत चाहते हैं लोकरंजन में प्रवीण हों।

घी खाहिये शक्कर से दुनियाँ ठगिये मक्कर से।

बिना कुछ नोन मिर्च मिलाये जायका नहीं आता पर क्या करैं बुरी आदत छुटाये नहीं छुटती।

"जाको जौन सुभाव जाय नहि जी से।
नीम न मीठी होय सींच गुड़ घी से"

देखते हैं तुम सरासरा अन्याय और अनुचित कर रहे हो, चाहिये कि हम भी तुम्हारी हाँ में हाँ मिलाय अपना मतलब गाठैं तुम्हैं यदि टोंक देंगे या तुम्हें रूखी सुनावैंगे तो तुम क्यों हमसे खुश होगे।

"अप्रियस्य च पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः"

चलन—हमारे देश की अन्धी गूंगी बहिरी प्रजा का। वे मुह बोलना जानते ही नहीं चाहें इन्हें जितना दबाओ दबते जाँयगे अधिक सताओगे भीतर ही भीतर मसोस के रह जाँयगे आह भरना या काखना गुनाह है। किसी ने इन पर कुछ थोड़ी दया कर दिया निहाल हो गये फूले नहीं समाते। इनका हक इन्हें समूचेका समूचा मिल जाता सो तो कभी सम्भव नहीं है एक की जगह आधा और तिहाई भी मिल जाय तो ये उतने ही से प्रसन्न हैं। आधे पेट भी खाने को मिलता रहे तो उतने ही से सन्तुष्ट पेट भर खाने को कभी न मागैंगे। सबर इतना कि गम खाकर पेट भर लेते हैं अन्न को परवाह नहीं करते। क्षमाशील ऐसे कि बदला चुकाना सीखा ही नहीं कितना ही कहो कितना हो जगाओ तबियत में जोश कभी जगह करे ही गा नहीं।

चलन—प्रेम को।

"है इत लाल कपोत ब्रत कठिन प्रेम की चाल।
मुखसों आह न भाखिहैं निज सुख करो हलाल"

चलन—हमारी अन्धी समाज की। सब तरह पर यह निश्चय करा दिया गया है कि जो चलन हमारी समाज का इस समय है हर तरह पर आर्य जाति को कमजोरी को दिन-दिन बढ़ा रहा है इसे छोड़ो और अब आगे को समझ के चलो जिसमें भला हो बहुत सो चुके अब जागो आँख खोलो अन्धे बने रहने से काम न चलेगा। एक बात भी मन में नहीं धसती।

चलन—कृतघ्न नाशुकरों की—

'यश्च निम्बं परशुना यश्चैनं मधुसर्पिषा।
यश्चैनं गन्धमालाभ्यां सर्वस्य कटुरेव सः"

चाहे अपना सिर काट के रख दो पर एहसान फरामोश कभी खयाल न करेगा।

"कृतघ्ने नास्ति निष्कृतिः"

भले मानुस सिर से तिन का टार देने के भी इतने एहसानमन्द होते हैं मानो लाखों रुपया उन्हें दिया गया। किन्तु अपना स्वार्थमात्र का मित्र कृतघ्न दबाने पर चारो जितना गिड़गिड़ाये और चारदासी करै पर पीछे से दुश्मनी ही करेगा।

सन्तस्तृणोत्तारणमुत्तमाङ्गात्सुवर्णकोट्यर्पणमामनन्ति।
प्राणव्ययेनापि कृतोपकाराः खलाःपरं वैरमिवोद्वहन्ति॥

अचरज है ऐसे विश्वासघातक का बोझ पृथ्वी क्योंकर सहारे हुये है।

"उपकारिणि विश्वस्ते शुद्धमतौ यः संचरति पापम्—
तं जनमसत्यसन्धं वसुधे देविकथं वहसि"।

चलन—कृपणकदर्य लोभियों की—

"चमड़ी जाय दमड़ी न जाय"

बात जाय पत जाय निन्दा हो कहाँ तक कहैं जान तक चली जाय बला से धन पास का न जाय:—

"अर्थास्तु नः केवलम्"

किं वहुना ऐसे वद्धमुष्टि अर्थ - पिशाचों के ढंग और सिद्धान्त ही निराले हैं समझ निराला है सारांश यह कि ये एक निराली दुनियाँ के जानवर हैं। हम ने एक रास्ता दिखला दिया जो वच गये हों उनके भी चलन का पता लगालो।

जुलाई १८६२

# (१४) चलन की गुलामी

चलन भी क्या ही एक अजीब ढर्रा है। चाल जो चल पड़ी सो चल पड़ी किसकी सामर्थ जो चलन के प्रवाह को रोक सकै। एक नहीं लाख-लाख वेद की ऋचायें हज़ार-हज़ार पुराण के उपदेश सौ-सौ कुरान को आयतें चलन के विरोध में प्रमाण दिये जाँय पुराने इतिहास और तवारीखों में से छाँट-छाँट दृष्टान्त और नज़ीरें इसके लिये दिखलाई जाँय कि यह चलन या रिवाज जिस की गुलामी में तुम फसे हो हर तरह पर बेजा और तुम्हारी भूल है। इस तरह को गुलामी में सिवाय हानि के लाभ कोई नहीं है पर चलन के प्रबलप्रवाह में बहे सो बहे काहे को रोके रुक सकते हैं।

यद्यपि इस चलन की गुलामी से कोई देश और कोई जाति बचा नहीं है किन्तु जो देश अपनी उन्नति की दशा में है और जो जाति नित्य नित्य तरक्की कर रही है वहाँ यह चलन फैशन में दाखिल कर ली गई है खूबसूरती नफासत और सभ्यता का श्रेष्ठ अंग समझा जाता है। बड़े से बड़े ओहदे-दार प्रतिष्ठित खानदानी लार्ड और ड्यूक तक की मेम भरी मजलिस में बन्दरिया के समान परपति के साथ उछलती कूदती हैं हम लोगों के नेत्रों को महाअसह्य अप्रिय मालूम होता है पर वहाँ यह सभ्यता की एक उमदा बानगी है और ताण्डव नृत्य के लालित्य को भी मात करता है। किसी की मेम कोई अपने साथ बग्घी पर बैठाये घूमता फिरै किसी तरह का अन्देशा या खटका मन में लाना शाइस्तगी और शिराफत के खिलाफ है हमारे यहाँ कुलांगना ललनाओं को परपुरुष से बोलना और मिलना कैसा। एक बार किसी अन्य पुरुष की ओर नज़र उठा

देखना भी सतीत्व का जड़ पेड़ से छिन्न-भिन्न और निर्मूल होना है। यहाँ घूँघट तीन हाथ का लम्बा लटकता हो नख से सिख तक सोने से लसी हों पर पाँव नङ्गा रहेगा और बेड़ी की तरह एक-एक पाँव में पाँच-पाँच सेर का बोझ बिना डाले सन्तोष और प्रसन्नता नहीं। वहाँ पाँव का देख लेना ही मानों लाज और शरम की बिदाई करना है। चीनियों में स्त्रियों का पाँव छोटा होना खूबसूरती और नज़ाकत है लड़कपन से एक प्रकार का लोहे का जूता लड़कियों को पहना देते हैं जिसमें पाँव बढ़ने न पावे। ईरान देश की स्त्रियों का शरीर नख से शिख तक नकाब से ढँका होता है केवल दो छिद्र आँखी के आगे देखने के लिये खुले रहते हैं पर नकाब के भीतर से ऐसा टाँय-टाँय बोलती हैं कि कान की चैली उड़ती है।

इस तरह पर भिन्न-भिन्न जाति के नर तथा नारियों में कितनी ऐसी चलन रूढ़ हो गई हैं कि अब दूर होना किसी तरह सम्भव नहीं। अङ्गरेजों में बीबी के गुजर जाने पर उसकी बहन के साथ दूसरी शादी न करने की चलन पड़ गई है। विलाइत के लोग बहुत चाहते हैं कि इस रिवाज को तोड़ दें कई बार इसके लिये पार्लियामेंट में बिल पेश हो चुकी है पर मंजूर नहीं होती हमारे यहाँ दक्षिणियों में मातुल कन्या परिणयन मामा की लड़की के साथ ब्याह करना सर्वत्र शास्त्रविरुद्ध है दक्षिणी ब्राह्मणों को इस अंश में सब लोग निन्दते हैं किन्तु चलन जो चल पड़ी सो चल पड़ी किसी के दूर किये नहीं दूर होती। बङ्गाल के कुलीन ब्राह्मणों में बहुत विवाह की चलन है एक आदमी अठारह ब्याह तक कर लेता है सब लोग चाहते भी हैं कि इस निन्दित चाल को उठा दें पर नहीं उठाये उठती। वहाँ इस उन्नीसवीं शताब्दी के सभ्यता के प्रकाश में भी उपयुक्त बर का मोल होता है कन्या के लिये जैसा अधिक

पढ़ा लिखा सुयोग्य बर चाहो वैसा अधिक दाम खरचो। बी० ए० पास किया हुआ ग्रेजुएट का सब से अधिक मोल अंडर ग्राजुएट का उससे कम खाली इन्ट्रेंस पास हो उसका सब से कम। हमारे यहाँ सर्वथा निर्मूल नाड़ी वर्ग विचारने की चलन है घर अच्छा है बर अच्छा है कुल अच्छा है बर कन्या दोनों कुण्डली के ग्रह उपयुक्त स्थान में बैठे हैं। लण्ठाधिराज पुरोहित जी ने आँय-बाँय-शाँय गिन गुथ कह दिया नाड़ी एक होती है कन्या राक्षसी है सातवें महीने पति को भख लेगी नाड़ी वर्ग नहीं बनता कन्या तथा बर के बाप माँ मुँह ताक हाथ मल रह गये शादी फिस्क। पंजाब के खत्रियों में स्यापे का कुचलन है राँड़ और एहवातियों में कोई फर्क ही नहीं है स्यापे के गम से कभी खाली नहीं सधवा भी विधवा मालूम होती हैं जीते जी मृत प्राणी का कभी नाम भी न लेंगी मरने पर उसके नाम इतना छाती पीटेंगी मानो मुहर्रम को ढोल या बारात के आगे धौंसा पिटता हो। दंभ के महा-महोपाध्याय कनोजियों में तथा कायस्थों में या इस प्रान्त के सरवरियों में करार की कुप्रथा चलपड़ी है कितनी बिना व्याही रह जाती हैं करार के माफिक धन देने को रुपया पास न हो व्याह न हो सकेगा। सरवारियों में एक प्रथा और भी है कि इनमें यज्ञोपवीत जो ब्राह्मणों का मुख्य संस्कार है विवाह का एक अंग हो गया है इधर जनेऊ लड़के के कन्धे में छोड़ा गया उधर चट्ट मगनी पट्ट व्याह बाल्य विवाह की कुरीति को ऐसा गहके पकड़े हुये हैं कि काहे को कभी उससे गला छुट सकता है। विवाह में गाली गाने की कुप्रथा भी एक जघन्य चलन में है असूर्यपश्या सूर्य चन्द्रमा भी जिन का मुख देखने को तरसते हैं सो सब परदेदारी को लात मार ऐसा फोश बकती हैं कि भाड़ों की भी इतना फोश बकने की हिम्मत न होगी। बाल्यविवाह स्त्रियों का मूर्ख रहना कुल-कुटुम्ब का

एकान्न भोजन एक-एक जाति का अलग-अलग चौका इत्यादि कुसंस्कार ऐसे दृढ़ हो गये हैं कि सब चलन में दाखिल कर लिये गये हैं। कितना ही समझाओ कि हमारी वर्तमान हीन दशा का यही सब बुरी रिवाज कारण है पेज़ के पेज रंग डालो कौन सुनता है वरन् इसे अपनी आर्यता का प्रधान और श्रेष्ठ अङ्ग मान लोग लिखने वाले की जीट उड़ाते हैं भ्रष्ट बेदीन नास्तिक इत्यादि उपाधि का खिताब उसको समाज से मिलना सहज हो जाता है।

हम कह चुके हैं कि जो जाति या देश स्वच्छन्द और तरक्की पर हैं वहाँ की कुचलन भी न तो आँख को अशोभित होती है न इसलिये उन्हें कोई निन्दता या निदरता है और न उनसे उनकी किसी अंश में कोई हानि है। किन्तु हिन्दुस्तान ऐसे गिरे देश में कुसंस्कार के रूप में वे ही सब चलन बद्धमूल हो कोढ़ में खाज हो गई हैं दिन-दिन हमारी घटती और ह्रास की सहकारी हैं।

गृहस्थ गृहमेधी आदि शब्दों के अर्थ पर ध्यान देने से बोध होता है कि गृहस्थी मनुष्य के लिये सब सुख की खान है। अंगरेज़ी में भी कहावत है—"अपना घर यावत् सुख का केन्द्र भाग है; इसी से सांसारिक जीव हम सबों के लिये पुराने समय के बुद्धिमानों ने गृहस्थी बाँध कर रहने का नियम किया है सो गृहस्थी आधीन स्त्रियों के है

"गृहैर्दारैर्मेधन्ते वर्द्धन्ते गृहमेधिनः"

फारसी की दो लफ्ज़ जनाना और मर्दाना गृहस्थी ही स संबन्ध रखती हैं किन्तु घर के सम्बन्ध में मरदाने की कोई इज्जत नहीं है जैसा जनाने की। घर के मरदाने हिस्से में हम चाहे जैसे रहते हों जनाने के भीतर पाँव रखते ही हमें सब तरह पर सावधान बिनीत शालीन और बुर्दबार बन जाना पड़ता है। बाहर हम जगत् भर के शिक्षा गुरु पूज्य पाद और सकल प्रतिष्ठा की

खान हों पर अन्तःपुर में पाँव रखते ही अपना सब गौरव सदर दरवाज़े की डेहरी पर छोड़ देते हैं। पांच वर्ष के दुध मुहे बालक के समान नादान सरल कोमल और हलीम हो जाते हैं। तो सिद्ध हुआ कि गृहस्थमात्र को अन्तःपुर न केवल सब सुख की खान है वरन उत्तम से उत्तम शिक्षा हमें वहीं से मिलती है। जहाँ तक हम इस के गौरव और प्रतिष्ठा को चित्त में आदर दें सब उचित है। उस अन्तःपुर की हम लोगों में जो दुर्गति और जो अपमान तथा हीनता है उसे कहते शरम आती है और सुनने से मारे दुःख के हृदय काँप उठता है सो इस सब शरम और दुःख का कारण यही चलन की गुलामी है।

इस चलन की गुलामी ने जैसा अपना असर हमारे ज़नाने में पैदा कर रक्खा है उसे कहते शरम आती है। असर क्या वल्कि यह तो उन निरपराधिनी अबलाओं पर ऐसा भारी अत्याचार है कि पत्थर का कलेजा भी दरक उठे तो सभ्यजाति के लोगों को जो हमारी ललनाओं की दीनदशा पर तरस आता है तो कौन अचरज है। भूमण्डल में स्त्री जातिमात्र की सतीत्वगुण में शिरमौर भारत की ललनाओं में यदि चलन की गुलामी का असर कम हो जाता और उन की दीनदशा का परिवर्तन किया जाता तो क्या हम भी इस लायक न होते कि तरक्की की सीढ़ी पर पाँव रखते। सच मानिये केवल इसी पाप के कारण हम अधोगति को प्राप्त हो रहे हैं और पढ़ लिख उत्तम शिक्षा इत्यादि बाहरी तरक्की का कोई असर हमारी कौम पर नहीं होता। अच्छा तो इसमें उन निर्दोष अबलाओं का कुछ अपराध है नहीं इसमें दोष आरम्भ से पुरुषजाति का है! शुरू से चलिये सब के पहिले आठ वर्ष में उनका विवाह कर देना। ऐसा क्रोध आता है कि जिस पामर ने गौरी-विवाह की महासत्यानासी चलन निकाला है मिलता तो उसकी तिल-तिल

५

माँस काट चील और कौओं को लुटाते। हमारे इन दिनों के संशोधक संशोधन का दम भरते हुये ग्यारह अथवा बारहवें वर्ष में कन्याओं को व्याह देने की राय पुष्ट करते हैं हम कहते हैं क्या वह बाल्यविवाह न हुआ? रजोदर्शन के पूर्व उसका व्याह कर दिया जाय यह कैद किस लिये रक्खी गई है? संशोधकों को चाहिये इस कुचलन को सब के पहले उठाने की चेष्टा करें इस बात की कैद करदी जाय कि रजोदर्शन के पहले कभी कोई न व्याहे उपरान्त इखतियार है जहाँ तक देर हो सकै

"अधिकस्य अधिकं फलम्"

और जो इसके विरुद्ध करने का साहस करै इसको समाज से बड़ा भारी दण्ड दिया जाय! जब तक १२ वर्ष के भीतर व्याह देने को चलन रहेंगी तब तक लड़कों का ऊँची उमर में व्याहना कहाँ सम्भव हो सकता है। माना तुमने लड़के को ऊँची उमर में व्याहने का प्रण भी कर लिया तो अब उपयुक्त पात्री उसको नहीं मिलती इसी से हम लोगों को लड़कों का व्याह भी लाचार हो छोटी उमर में करना पड़ता है। शास्त्र में ऐसा बचन कहीं नहीं पाते कि बाप के लिये लड़के का व्याह कर देना फर्ज है जैसा लड़कियों का व्याहना धर्म समझा गया है। जिस समय ५२ वर्ष और २४ वर्ष के ब्रह्मचर्य्य की प्रथा थी क्या उस समय १२ वर्ष के उपरान्त समग्र वेदवेदाङ्ग में पूर्ण हो लोग गुरुकुल से आय गौरी से बिबाह कर अपने करम को बैठ कर झींखते थे जहाँ विवाहोत्तर चतुर्थी कर्म एक प्रकार की ऊब थी वहाँ गौरी विवाह की कुप्रथा तो साफ-साफ असङ्गत और निरी बेअक्किली है। चतुर्थी कर्म जो विवाह का एक अङ्ग है और इसी लिये इस नाम से कहलाया कि तब तक नियमपूर्वक संयम के साथ ब्रह्मचर्य से रहना उचित कर्म था। इसी कुचलन के कारण बीस ही बाइस वर्ष में गाल चुचक जाता है पिण्डरोगी चेहरा जर्द मानो

वर्षों से बीमार देह में ताव नहीं उठते बैठते ताँवर आती है—

"नई जवानी मांझा ढील,,

कमर झुक गई ३० वा ३५ वर्ष तक पहुँचे कि बुढ़ाने लगे। जब कि और-और मुल्क के लोगों में तीस पैंतोस में नई जवानी का शुरू होता है यहाँ बुढ़ाने लगते हैं। चलन की गुलामी के पहले सूत्र की व्याख्या यहाँ तक हमने आम को कह सुनाया अब आगे चलिये।

हमारी ललनाओं का मूर्ख रहना दूसरी विपत्ति हमारे लिये है। सौ बालकों को पढ़ाने से उतना उपकार गृहस्थी का सुख और जन्म का साफल्य नहीं है जितना एक कुलवती बालिका के पढ़ाने से है। एक तो परदे के भीतर कैदखाने में बन्द उसमें निरा दासी कर्म में तत्पर उसपर नितान्त अपढ़ तब हम क्यों कर उम्मैद कर सकते हैं कि चलन की इस कदर पैरवी से हमें गृहस्थी का सुख मिलै और न मिला तो इसमें कुसूर हमारा है कि उन पराधीन बेबस ललनाओं का है? क्योंकि हमीं तो चलन की गुलामी से जकड़े हुये उन्हें शिक्षिता होने से बरजते हैं। यदि हमारे देश में स्त्रियाँ विद्यावती होने लगें तो अनेक कुरीतें जिसके दूर करने को हम बाहर कितनी कमेटियाँ और समाजसंशोधन के नाम से सभायें किया करते हैं ताली पीट-पीट लेक्चर झाड़ा करते हैं फिर कभी इन बातों की जरूरत रह जाय। जब तक हमारे जनाने से उन बुराइयों की जड़ न कटेगी जब तक बाहरी कमेटी या सभा समाज पर कोई असर नहीं पैदा कर सकती। भले-भले घरों में टोटका टनमन के बहाने भूत-परेत; डाकिनी-शाकिनी की पूजा; ऊटपटांग मान-मनौती को स्त्रियों की मूर्खता ही ने स्थान दिये हैं। चेचक के उपद्रव के समय प्रतिवर्ष सदहां लड़के जायां जाते हैं किन्तु स्त्रियों की मूर्खता ही के कारण शीतला हैं देवी हैं इस विश्वास पर दृढ़

रह कर गृहस्थ उस रोग का ठीक-ठीक प्रतीकार नहीं करते। मूर्खातिमूर्ख निपट निकम्मे साइत मुहूर्त बताने वाले ब्राह्मणों की प्रभुता घरों के भीतर अपढ़ ललनाओं ही के कारण से है। पुराणों के वेहूदा किस्से कहानियाँ जो कुछ उपदेश या भलाई पैदा करने के बदले मन और तबियत को बिगाड़ते हैं और बुराई की ओर रग़बत दिलाते हैं उनमें स्त्रियों की रुचि और श्रद्धा भी उनकी मूर्खता का कारण है। ऐसी-ऐसी कितनी बातें हैं जिनसे हमारी समाज ऊपर को उठने की कौन कहे दिन-दिन गिर रही है इस सब का बाइस स्त्रियों का अपढ़ रहना ही है। पढ़ाने से हमारा यह प्रयोजन नहीं है कि प्रेमसागर ब्रजविलास खैराशाह की बाहरमासी या मीरहसन की मशनवी ऐसी-ऐसी नष्ट पुस्तकें उन्हें पढ़ाई जाँय किन्तु गणित भूगोल इतिहास दर्शन विज्ञान आदि की उत्तम से उत्तम पुस्तकें पढ़ाई जाँय जिससे उनके नेत्र खुलैं हृदय का अन्धकार दूर हो पुराण की झूठी-झूठी गढ़न्त और किस्से का असर जो उनकी नस-नस में भरा हुआ है दूर हो ? उत्तम शिक्षा उन्हें दी जाय और अच्छे क्रम से शिक्षिता की जाँय तो उनकी रुचि आप ही इधर से हट जा सकती है। वरन् उन्हीं पुराणों में वे खुद आप उन विषयों को अपने लिये मनोरंजक चुन लेंगी जिसके लिये पुराणकर्त्ताओं के बुद्धि-वैभव को हम कई बार सराह चुके हैं।

पुरानी लीक को पीटते जाना और मज़हबी या धर्म सम्बन्धी जोश का हमारे देश में इसी तरह पर कायम रहना जैसा अब है ये दोनों बातें भी इसी चलन की गुलामी की बड़ी सहायक हैं। इसकी जड़ भी उमदी तरह पर तभी कटेगी जब स्त्रियाँ पढ़-लिख विद्यावती हो जाँयगी। बस हम बहुत थक गये आज़ाद ख्याल को हद से ज़ियादह जगह दे दिया आप की खातिर। के

खिलाफ हुआ हो तो माफ कीजियेगा भ्रष्ट नास्तिक बेदीन जो कुछ ख्याल हमारे निस्बत आप के मन में जमा हो लाचारी है पर मैं आप का सच्चा सेवक और खादिम हूँ, किमधिकम्।

जुलाई १८६३

# (१५) रसा भास

इसे कौन अभागा स्वीकार न करेगा कि हमारे यहाँ की कवि मण्डली ने कविता को वारीकी में बड़ा सिर पचाया है और वाग्देवी अपनी उत्कर्षता को जैसा हमारे वहाँ चहुँची है वैसा न किसी देश में पहुँची है न पहुँचेगी। इसी बारीकबीनी के कारण बढ़िया से बढ़िया रचना और काव्य ज़रा सी बात में दूषित और वेकाम कर दिये गये हैं। उन अनेक कविता के दोषों में रसाभास भी एक है जो जाति देश काल पात्र वर्ण आश्रम वय अवस्था आदि के प्रतिकूल वर्णन से सहजमें हो ज़ाता है जो ऐसा भद्दा और बेतुका बोध होता है मानो खोर में किसी ने नोन मिला दिया हो या खिचड़ी में मीठा और यह ऐसा खटकता है मानो स्वादिष्ठ भोजन में बालू मिल गया हो। जाति में जैसा मृग, शशक आदि निर्बल चतुष्पद जावों में पराक्रम का वर्णन और सिंह और हिंस्र जीवों में साधु भाव। देश में जैसा मरुस्थल अथवा सूने जंगल में रम्यता का वर्णन हरे-भरे सुहावने देश में सन्नाह्टा और उदासी दिखलाना। काल में जैसा हेमन्त और शिशिर में जलबिहार। ग्रीष्म में पञ्चाग्नि सेवन। दिन में दीपावली। पात्र में जैसा ब्राह्मणता की प्रशंसा शिकार खेलने,में या युद्ध में क्षत्री में शान्ति, शूद्र में विद्यावैभव तपोबल उदारभाव दिखलाना, और भी ब्रह्मचारी या यती का ताम्बूल सेवन या दारोपसंग्रह बुढ़ापे में आशिकी और जवानी में वैराग्य। दरिद्र भूक्खड़ में अमीरी का ठाठ और उदारता आदि का वर्णन रसाभास है। और भी विद्या वय या ऊँच जाति वाला हर तरह पर उत्कृष्ट हो विद्या वय या हीन जाति वाले निकृष्ट को बराबर की

प्रतिष्ठा या मान दे या अपने को उससे कम दिखलावे जैसा हंस को कौआ का आद असमंजस और अरुन्तुद है वैसा ही इस प्रकार के रसाभास भी विदग्ध जन और रसिक समाज के मन को कष्ट पहुँचाते हैं।

रसाभास अनेक प्रकार से होता है जैसे शृङ्गार के वर्णन में वीभत्स या करुणा की कोई बात कह देना। आरम्भ से बराबर उत्साह और बीरता का वर्णन चला आता है लोगों के चित में वीर रस छा रहा है किसी ने आकर दो चार ऐसी डरपोक बातें कह दीं कि लोग पस्त हिम्मत हो गये लड़ाई करने का सब हौसिला जाता रहा। इसी तरह शान्त रस में रौद्र या शृंगार रस का वर्णन भी रसाभास है। इस प्रकार का रसाभास होने से सुन्दोपसुन्द न्याय के अनुसार दोनों रस बिगड़ जाते हैं। जैसे जहाँ शान्त रस का उद्‌गार सब ओर से छा रहा है किसी ने शान्ति में बाधा डालगे को जोश और क्रोध दिलाना चाहा पर वहाँ तो चिरकाल से शान्ति छा रही है जोश और उत्साह मानो राख में होम के समान हो गया अब न शान्ति ही वहाँ जमने पाती है न जोश या उत्साह ही ने जड़ पकड़ा जो स्थायी होकर रहता। हमारा हिन्दुस्तान इस समय इसी रसाभास के रगड़े में पड़ा हुआ खराब खस्ता हो रहा है हजार-हजार तदबीर की जाती है कि शान्त रस को झाड़ू मार दूर बहावें; तितिक्षा क्षमा गम खोरी पस्त हिम्मती भीरुता को भार में झोंक यहाँ के लोगों में उत्साह हिम्मत साहस उतेजना जोश पैदा हो जाय इसी के लिये तरह-तरह के उतेजक लेख लिखे जाते हैं। बड़े जोश खरोश के साथ लम्बी-लम्बी स्पीचें दी जाती हैं जगह-जगह कानफेरेन्स होता है प्रति वर्ष कानग्रेस किया जाता है भाँति-भाँति की कमेटी और क्लब स्थापित होते हैं पर चाण्डाल शान्त रस का असर यहाँ से हटाये नहीं हटता विदेशियों के मुकाबिले अपनी

मान हानिपर हमें कभी क्रोध आता ही नहीं अपना हक्क और सत्व पहचानना किसे कहते हैं जानते ही नहीं मजहब के जाल में फँसे हुये धर्म रक्षा के लिये कहो प्राण दौड़ालें स्वत्व रक्षा (Rights and preveleges) क्या है कुछ समझते ही नहीं। आस पास के मुल्कों में दूसरी-दूसरी जाति के लोगों को ऊपर चढ़ते और सब भाँत की तरक्की करते देख यही मन में आता है कि केवल अत्यन्त शान्ति ही के कारण यह रसाभास हम लोगों के बीच विद्यमान है और हटाये नहीं हटता जिससे देश का देश बुझी राख के समान निर्जीव हो रहा है। और भी ईसा के मत की पोल खुल जाने से पादरी साहब का वाँय-वाँय अब रसाभास है। होटल चल जाने से हमारे चौके में अब रसाभास हो रहा है। नई सभ्यता के प्रचार से ब्राह्मणों की जीविका में रसाभास है। चुंगी के अधिक हो जाने से रोजगारियों के व्यापार में रसाभास है। टैक्स की झोंका-झोंक और हर एक बहाने रुपये की खींच से महाराणी के न्याय और प्रजा के सुख और आराम में रसाभास है। भिखारियों के नित हाथ पसारे रहने से दानी की उदारता में रसाभास हो जाता है।

नित्यं प्रसारित करः करोति सूर्योपि सन्तापम

गाई गीत को फिरफिर गाने की भाँत एक ही बात को पल्लवित करने से लेख में भी रसाभास होने की डर है इससे बस।

अक्टूबर १८८६



## (१६) हिन्दुस्तान के रईस

अपने पूर्व संचित पाप कर्मों का भुगतमान भुगतने को जो हत भाग्य इस भारत भूमि में हमें जन्म लेना था तो रईस पद-बाच्य कोई बड़े ज़मीदार तअलुकेदार छोटे-मोटे राजा या कोई बड़े महाजन क्यों न हुये ? घुँघुरवाली जुल्फों में सेरों अतर और फुलेल का संहार किया करते; कचभार और रत्नों का हार धारण कर गुड़िया से बने हुये अमीरों की फ़िहरिश्त में नाम दर्ज कराये गद्दी पर बैठे-बैठे पान चबाया करते। हाँ में हाँ मिलाने वाले खुशामदी लोग अहर्निश घेरे रहते हम उनकी झूठी तारीफ़ सुन मनमगन फूले न समाते। या तो रातो-दिन आठो-पहर पूजा किया करते नहीं तो भाँड़-भगतियों में मिल रूपाजीवा वारबनिताओं के साथ चैन उड़ाते। दीन दुखिया असामी या आश्रितों का धन चूस अमीरी का ठाठ गाड़ी घोड़ा शीशे आलात से घर साज वैभवोन्माद का अभिमान प्रगट करते हुये फूले न समाते। दो चार अक्षर की उपाधि पाने को राजकर्मचारी हाकिमों की सेवा-टहल और भक्ति भावना में व्यग्र रहते; जिसमें दरबार में कुरसी पावें और राज भक्तों की लिस्ट में हमारा भी नाम रहे। अपनी वर्त्तमान परतंत्र दुःख दशा को सकल सुख की खान मानते; जैसे कुत्ता सूखी हड्डी चबाव अपने ही मुख का रुधिर चूस परम सन्तुष्ट होता है वैसे ही सिंह का सा पुरुषार्थ तो काहे को हम से हो सकता खाली घर ही में घेरौंधा खेला करते; केवल अपना आराम और चैन को मुख्य समझते और उसमें जितना अपव्यय होता कभी उसे बुरा न समझते; पर हाँ पबलिक सर्व साधारण के

हित में कभी एक पैसा भी जो चला जाता तो उस पर बड़ा पछतावा होता अब विचार कर देखो तो इन श्रीमन्तों को हम क्योंकर सुखी मानना चाहिये; इसमें सन्देह नहीं मनुष्य जीवन में सुख की खान विभव के ये आधार पात्र हैं किन्तु उनका अनुराग उनकी बुद्धि सच्चे चिरस्थायी सुख की ओर कभी दौड़ती ही नहीं। ये उन्माद में आय दिन को रात और रात को दिन समझते हैं।

या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी।
यस्यां जगर्ति भूतानि सानिशा पश्यतो मुनेः॥

ये कुमार्ग को सुमार्ग और सुमार्ग को कुमार्ग मानते हैं; उसमें भी यदि कहीं तालीम की किंचित् झलक आ गई जैसा इन दिनों होता जाती है तब तो अंगरेज़ियत और नई रोशनी की यावत बुराई सब इनके नस-नस में व्याप जायगी; पुराने क्रम की जितनी बुराइयाँ विषय लम्पटता आदि इनकी ओर से घिन न आवेगी नई सभ्यता की बुराई भी अलबत्ता अंग-अंग में प्रवेश कर लेगी। बोतल का काग एक क्षण भर के लिये हाथ से न छुटैगा। पुराने ढँग की भलाई हिन्दू धर्म पर चित्त से श्रद्धा अलबत्ता जाती रहेगी; आचार-विचार पर कुल्हाड़ा अवश्य है कि चलने लगे; संशोधन की और कोई बात हो चाहे न हो।

इनके कुत्सित आचरण देख कौन सा विचारवान् होगा। जिसके नेत्रों से आँसू न टपक पड़े परन्तु क्या किया जाय ईश्वर हम से रूठा ही है कि भारत का उत्थान न होने पावे; नहीं तो जब और-और सभ्य देश के धनी कितने ही विषय लम्पट होंगे पर देश अनुराग जाति वात्सल्य में उदाहरण हैं;पर ये कुम्भकरण की घोर निद्रा में सोये हुए हमारी लेखनी को शोकसागर में डुबाने का हेतु होते हैं। सुशिक्षा का सच्चा और वास्तविक बड़ा फल देशा-

नुराग है सो देश की पूरी भलाई तभी हो सकती है जब हम को अपनी रीति-नीति पर प्रेम हो तथा उसे अच्छा समझे। वंग देश और बम्बई प्रांत के रहने वालोंमें शिक्षा का प्रादुर्भाव हमसे पहले हुआ; आदि में वे भी ऐसे ही भटक गए थे; अपनी रीति-नीति से बनाने लगे और विदेशियों की हर एक बात को अपने से श्रेष्ठ समझ स्वीकार कर लिया था; पर इनमें यह बात अब धीरे धीरे उठती चली जाती है। जहाँ बहुत से ऐगुण विदेशियों के उन्होंने सीखे वहाँ विदेशियों का सा देशानुराग और मुल्की जोश तथा जातीयता का गौरव अपने में आना भी उन्होंने कुछ कुछ सीखा जो हमारी होनहार तरक्की का बीजरूप है। हमारे यहाँ के उच्च श्रेणी वाले अंगरेज़ी शिक्षा की बरकत पाय लामज़हबी शराबखोरी जिसे यूरोप वाले खुद आप बुरा कहते हैं अलबत्ता सीख गये; साहस, स्थिरता, धैर्य, आत्मत्याग, आदि उनके गुण एक भी न सीखा दैव को कुछ ऐसाही मंजूर है कि हम रोज़ नीचे को गिरते जाँय लाचारी है॥

फरवरी १६०१

# ( १७ ) दरिद्र की गृहस्थी ।

गृहाश्रमो हि निःस्वानां महत्येषा विडम्बना ।
तस्मात्पूर्वमुपादेयं वित्तमेव गृहैषिणा ॥

दरिद्र को गृहस्थी महा बिडम्बना अर्थात् बड़ा जंजाल है। इस लिये गृहस्थी करने की इच्छा रखने वाले को चाहिये पहले धन संचय कर ले तब गृहस्थी में आवे।

बरं सौढा मनुष्येण तीव्रानरकवेदना ।
नत्वेवच गृहे दृष्टं पुत्रदारक्षुधार्दितम् ।

कड़ी नरक वेदना सह लेना सहज है किन्तु द्रव्य के अभाव से स्त्री और पुत्रों का भूख के मारे पेट की अग्नि में झुलसते हुये देखना नहीं सहा जाता।

असंभवे शिशुं दृष्ट्वा रुदन्तं प्रार्थना परम् ।
वज्रसार मयं मन्ये हृदयं यन्न दीर्यते ॥

जो किसी वस्तु के लिये गिड़ गिड़ाते हुये बालकों को देखता है पास धन न रहने से उनके मनोरथ को नहीं पुरै सकता और इस दुःख के कारण उसका हृदय नहीं फट जाता इससे जान पड़ता है वह मनुष्य बज्रसा कठोर हृदय है।

साध्वीं भार्यां प्रियां दृष्ट्वा कुचैलां क्षुत्कृशी कृताम ॥
अस्य दुःखस्य तन्नास्ति सुखं यत्समतां व्रजेत् ॥

प्यारी सती भार्या को मैले फटे कपड़ों से किसी तरह तन ढाँपे और भूखों मरते-मरते दुर्बल देख जो दुःख होता है उसका हमवज़न कोई ऐसा सुख नहीं है जो उस दुःख का बदला चुका सके।

रूक्षं विवर्णं क्षुधितं भूमि प्रस्तर शायिनम् ।
पुत्र दारं निजं दृष्ट्वा किमकार्यं भवेन्नृणाम् ॥

अपनी स्त्री तथा पुत्र को भूख से क्षीणकाय, रूखी देह धरती में पड़े लोटते देख उनके भरण-पोषण तथा तन ढाँपने के लिये कौनसा ऐसा बुरा काम है जो आदमी नहीं कर गुज़रता।

बाहूपधानं क्षुत्क्षामं दृष्ट्वा दीन मुखं सुतम् ।
मृत्यु रेवोत्सवः पुंसां व्यसनं जीवितं द्विज ॥

क्षुधा से दुर्बल हाथ को तकिया बनाय लेटे हुये दीन मुख पुत्र और स्त्री को देख मनुष्य के लिये मरण महा मंगल है जीवन उसका संसार में केवल दुःख भोगने को है।

परिसीदत्स्वपत्येषु दृष्टवा दीन मुखीं प्रियाम् ।
वज्रसार शरीरास्ते या नयाति सहस्रधा ॥

लड़कों को दुखी और अपनी प्रिया भार्या को खिन्न और उदास देख जो जीता है अवश्य उसका शरीर बज्रसार सदृश कठोर है तब तो उसके हज़ारों टुकड़े नहीं होते।

तस्मादर्थ विहीनस्य पुंसो दारपरिग्रहात् ।
कुतस्त्रिवर्ग संसिद्धिर्यातनैधहि केवलम् ॥

इससे धन हीन को गृहस्थी बाँध कर रहने में धर्म अर्थ काम त्रिवर्ग साधन जो गृहस्थी का मुख्य फल हैं सो तो कहीं लेश मात्र को भी नहीं है बल्कि गृहस्थी केवल नरक यातना का भोग है। ऊपर के श्लोक भविष्य पुराण के हैं जिनमें दरिद्र के गृहस्थाश्रम का ठीक-ठीक चित्र उतारा गया है। सच है दरिद्र के लिये गृहस्थी बाँध कर बैठना ऐसाही महा पाप का परिपाक है। किन्तु क्या किया जाय कुयें की भाँग है सब तरह की यातना लोग भोगते हैं कहीं से किसी तरह का सुख नहीं है तो भी कोई ऐसे

नहीं देखे जाते जिनको गृहस्थी से घिन हुई हो। रहने को घर नहीं है, पहिनने को कपड़े नहीं हैं, दिन-रात में एक बार भी भर पूर पेट भर भोजन मयस्सर नहीं है ऐसे लोग भी गृहस्थी की ओर से कभी एक बार भी नहीं घिनाते। लड़के का व्याह आ लगा अवश्य ही करेंगे, भूखों मर रहे हैं तौभी जायदाद गिरों रक्खेंगे कर्ज़ काढ़ेंगे पर लड़के को व्याहेंगे ज़रूर ही। कुछ ऐसी निषिद्ध चाल चल पड़ी है कि कांरा कोई रहने ही नहीं पाता। यदि किसी ने लड़के का व्याह न किया तो उसकी तारीफ़ कोई न करेगा बल्कि बिरादरी के लोग अङ्गुश्तनुमाई करेंगे और यही कहेंगे कि अवश्य इसमें कोई कर्ज़ है तब तो इसके लड़के का व्याह नहीं होता फिर जिनका व्याह होता है उनके लच्छन और सपूती देखो तो कोई ऐसी बात सिफ़त और तारीफ़ की उसमें नहीं है जिससे अनुमान हो कि यह अपनी गृहस्थी खातिखाह चला लेगा। ऐसे अपाहिज जब गृहस्थ और लड़के बाले हो बैठे तो वे क्या करेंगे, गुण कोई ठहरा नहीं जिससे वे अपना गुज़ारा करैं। भीख मांगैंगे, चोरी करैंगे, हज़ार किस्म की बेइमानी करैंगे,

किम कार्यं भवेन्नृणाम।

ऊपर के श्लोकों में यह एक टुकड़ा बहुत ही समझ कर लिखा गया है। हम कहते हैं किसी के चार लड़के हैं तो क्या ज़रूरत है कि वह चारों के गले में चक्की बाँध उसका जीवन सत्यानाश करे। जिसको योग्य समझे और उसका मन गृहस्थी करने को चाहता हो तो उसका व्याह कर उसे गृहस्थ बनावे नहीं तो बाप माँ अपने लड़कों के भलाई चाहने वाले नहीं हैं वरन् पूरी शत्रुता उसके साथ कर हे हैं। अस्तु, भर पूर धन पास हो तब बाप माँ अपने लड़कों का व्याह करदें तब भी कुछ ऐसी हानि नहीं है। धनी चाहे व्याह करते रुकैं भी पर दरिद्र को हम देखते हैं तो जहां लड़के का व्याह आ लगा कि लार टपक पड़ी अवश्य ही व्याहैंगे

लड़कों को ब्याह दिया मानो बड़ा बोझ सिर पर से टला। हिन्दुस्तान में भीखमंगे जो इतना बढ़े हुये हैं उसका कारण भी यही बाल विवाह है। पुत्र जन्म में लोग बड़ी खुशी मनाते हैं आनन्द सन्दोह में मग्न फूले नहीं समाते; हमें रंज होता है कि जहाँ देश में २८ करोड़ गुलाम और दास थे वहाँ एक और बढ़ा, कहाँ तक इस दुख रोने को रोते रहैं किसी एक के मन में भी तो हमारी बात न धंसी अंधे के आगे रोना अपना दीदा खोना है। लाचारी है क्या किया जाय इस वर्ष के कड़े दुर्भिक्ष ने गृहस्थाश्रम की अच्छी तरह कलई खोल दी इस दुर्भिक्ष में अन्नकष्ट भोग कर भी जो गृहस्थ बनने का हौसिला रखते हों उनके समान पाक बेहया और कौन होंगे। जिस बेहयाई का नमूना यहाँ देश का देश हो रहा है। जो इस बात से प्रत्यक्ष है कि इस वर्ष भी ऐसे कराल दुर्भिक्ष में लोग अपने लड़कों को व्याहने से न चूके सिंहस्थ में भी स्वार्थी ब्राह्मणों ने ऐसी लगन निकाल दिया कि शादियों का शुमार और साल के मुक़ाबिले कम न रहा। दरिद्र भारा क्रान्त भारत बसुधा का हम नहीं जानते अब और क्या अनिष्ट भावी है जो अपाहिज निपांगुर इन गर्दखोरों की गृहस्थी बढ़ती ही जाती है। हम गृहस्थाश्रम की निन्दा नहीं करते गृहस्थी सब सुख की खान और मनुष्य जाति की उन्नति का एकमात्र द्वार है किन्तु इस चलन की गृहस्थी को हम कभी न सराहेंगे जैसी हम लोग भुगत रहे हैं। देखते हैं तो समाज में धनियों की संख्या नित्य-नित्य घटती जाती है सो भी इसी लिये है कि दस-बीस वर्ष के बीच में एक दो धनी विभवशाली बंश क्षीण हो जाते हैं। पर ये धनहीन दरिद्री जो रुपया पास न होने से व्यभिचार तथा बेश्या संसर्गदूषित न हो सृष्टि पैदा करने की शक्ति में कम नहीं होते एक एक के छः सात से कम औलाद नहीं होती परिणाम में ऐसों की संख्या आबादी में बढ़ती जाती है सम्पन्न

समर्थों की गिनती घट रही है। भारत के दरिद्र हो जाने का यही बड़ा भारी कारण है इसी से ऊपर के श्लोकों में सिद्धान्त किया कि पहले धन संचय कर तब गृहस्थी में आवे। अत्यन्त दूधमुहे का ब्याह न किया जाय तब भी कुछ भलाई इसके बारे में हो सकती है किन्तु जगत् प्रवाह में पड़े हुये लोग कब हमारी सुन सकते हैं हम चाहे जितना गला फाड़-फाड़ चिल्लाया करें।

इस अपनी मूर्खता और नासमझी का परिणाम जो कुछ हो रहा है उसे कोई न मालूम करता हो सो भी नहीं है। सभी इस का फल भुगत रहे हैं और पड़े-पड़े काँख रहे हैं। किन्तु भेड़िया धसान तो है हिन्दू समाज का अवलम्ब ही भेड़िया धसान है। जिसके विरुद्ध चलना कैसा वरन् मुखसे कभी एक बात भी निकालना बड़ी बुराई है। भीतर ही भीतर चूरंचूर होते रहो पड़े-पड़े काँखा करो किन्तु समाज में सुर्खरुई चाहते हो तो अपने "मारेल करेज" को दखल न दो। इस विषय को पिष्टपेषण की भाँत हम न जाने के बार लिख चुके समझते हैं कि पढ़नेवालों को अरोचक होगा किन्तु फिर भी नहीं रहा जाता कुछ न कुछ लिख ही डालते हैं। पढ़ने वालों से प्रार्थना है कि हमें माफ़ करेंगे॥

जुलाई १८९७

## (१८) एक अनोखा स्वप्न

अकाल महामारी आदि अनेक भयङ्कर बड़े-बड़े उत्पात देख कल रात को पड़ा-पड़ा मैं सोच रहा था कि यह संसार केवल दुःख का आगार है पर यहाँ के रहने वाले प्रमाद मदिरा का पान कर ऐसा उन्मत्त हो रहे हैं कि अपने-अपने को सभी सुखी माने हुये हैं और यह निश्चय नहीं होता कि वास्तव में कोई सुखी है या नहीं।

इस-इस तरह का ऊहापोह मन में कर ही रहा था कि एक बारगी गहरी नींद ने मुझे ऐसा आ दबाया कि उसके अत्यन्त वश में हो यह अनोखा स्वप्न देखने लगा। मुझे जान पड़ा कि मैं एक ऐसे ऊँचे पर्वत के शिखर पर बैठा हूँ जहाँ पवन का भी गम्य नहीं है मेघ जिसकी ऊँचाई तक न पहुँच बीच ही में लटके रह जाते हैं। मैं इस बात के अचरज में हुआ कि हे परमेश्वर मैं यहाँ कैसे आ पड़ा और अपने चारो ओर नजर उठाय देखा तो सैकड़ों कोस के चौड़े मैदान लम्बी-चौड़ी झीलें बड़े-बड़े शहर जिनमें लाखों मनुष्य बसते हैं दिखाई दिये। एक ओर सभ्यता के छोर तक पहुँचे हुये राजा-महाराजा, सेठ-साहूकार वैभवोन्माद में उन्मत्त अपने-अपने वित्त के अनुसार हर तरह का ठाठ ठठे हुये फेशन परस्ती के पीछे परेशान संसार के सुख की सीमा अपने ही में मानते हैं एक ओर कङ्गाल किसान अपनी गरीबी के अभिमान में भूला हुआ थोड़े से खेत और फूस की झोपड़ी से सन्तुष्ट राजा महाराजाओं की सम्पत्ति को भी तुच्छ कहता हुआ अपने को परम सुखी माने हुये है। इस बात को सोच कि विश्वम्भर जगत् कर्ता ने मनुष्यों को उनकी अवस्था

के अनुसार सबों को सुखी और प्रसन्न किया है मुझे बड़ा हर्ष हुआ परन्तु जब यह ध्यान आया कि उनका यह सुख चिरस्थायी नहीं है और सृजित पदार्थ मात्र की दशा सदा एक सी नहीं रहती तब उदासी ने मुझे फिर आ दबाया। देर तक इसी एच-पेच में पड़ा था कि इनमें सचमुच सुखी कौन हैं और इन सब देशों को जिन्हें मैं अपने नेत्रगोचर कर रहा हूँ सच्चा सुख किसके बाँट में पड़ा है जहाँ जाकर सुख और आराम की खोज में बहुत दिनों से भटकते हुये मेरे आत्मा को विश्राम मिलै। पर ऐसा ठौर इस संसार में कहाँ है और जब कि सभी अपने-अपने को सुखी मानते हैं तो कौन कह सकता है कि यही स्थान सफल सुख की खान है। मारे शीत के ठिठुरे हुये पोलैण्ड लैपलैण्ड नारवे आदि देशों के रहने वाले मानते हैं कि सुख की खान हमारा ही देश है। सूर्यदेव की खरतर किरणों से अति तप्त अफरिका ऐसे पृथ्वी के उष्ण कटिबन्ध के अत्युष्ण देश के निवासी कृष्ण वरण हब्शी भयङ्कर गरमी से तड़फ रहे हैं पर वे भी यही कहते हैं कि सुखी हमी हैं। यह सब भिन्न-भिन्न भूभाग के रहने वालों का अपने-अपने देशों पर अनुराग देख उस समय मुझे यही निश्चय हुआ कि निज जन्मभूमि ही सच्चा सुख उत्पन्न करने वाली है। क्षण भर के उपरान्त फिर मुझे ख्याल हुआ 'नहीं-नहीं' यह मैंने क्या निश्चय किया यह तो स्वदेशानुरागियों का केवल पक्षपात मात्र है कदाचित् इसी से यह कहावत चल पड़ी है "नीम के कीड़े को नीम ही भाती है।" इससे तो यह निश्चय नहीं हो सकता कि सुखी कौन है। इतने में मुझे ऐसा जान पड़ा कि कोई आकर मेरे कान में यह कह रहा है यहीं बैठा-बैठा मनसूबा गाँठता रहेगा। हाथ कङ्गन को आरसी क्या तेरे नेत्र के सामने सब प्रत्यक्ष है नीचे उतर प्रत्येक

देशों की बातों को अच्छी तरह जाँच इसका निर्णय क्यों नहीं कर डालता।

इस आकाश-वाणी के सुनते ही मैं चौंक पड़ा और ऊँचे पर्वत से धीरे-धीरे उतर उसी बात की धुन में मौन साधे घूमने लगा और अनेक विचित्र लीलायें देखा उन सबों का स्मरण तो मुझे नहीं है उनमें दो चार बातें जो अब तक नहीं भूलीं और अचरज के कारण चित्त में खचित-सी हो रही हैं उन्हें आपको कह सुनाता हूँ। भ्रमण करते-करते ऐसे लोगों के समूह में जा पड़ा जिनकी धूमधाम और चमक-दमक देख चकाचौंधी सी आने लगी चित्त चकित हो गया। सैकड़ों मनुष्य हाथ बाँधे जिनकी प्रतीक्षा में खड़े रहते हैं जिनका एक बार उनकी ओर आँख उठा कर देख लेना भी मानो बड़ी कृपा समझी जाती है। सर्वाङ्ग जिनका सुवर्ण और बहुमूल्य हीरा जवाहिरों से लसा हुआ है, तनसोहनी मनमोहनी तरुणी जिन्हें सब ओर से घेरे हुये हैं, जिनका सुमधुर कोकिलालाप कर्णेन्द्रिय को परम सुख दे रहा है। बन्दीजन हाथ बाँधे सामने खड़े विरुदावली गा रहे हैं। दिल्लगीबाज़ मसखरे हाँ मे हाँ मिलाने वाले खुशामदी चाटुकार विटचेट विदूषक भाँड़ भगतिये चारो ओर जमा हैं रमूज़ और झूठी तारीफों से जी ख़ुश कर रहे हैं। जिनकी प्रसन्नता पूर्वक मन्द-मुसकियान और स्नेह युक्त कटाक्षपात में कुबेर की सम्पत्ति बसती है और क्रोध युक्त कराल भ्रूविक्षेप में महाकाल मृत्यु को प्रगट होते देर नहीं लगती। इस-इस तरह की विचित्र-विचित्र लीलायें देख मैंने अपने चित्त में यही स्थिर किया बस सुख की पराकाष्ठा यही है। इतने में एक स्त्री न जाने कहाँ से आय मुझे अत्यन्त विनीत भाव से प्रणाम कर बोली—महाशय, कहिये आपने क्या देखा और सब देख-भाल जो कुछ आपने निश्चय किया वह आप की बड़ी भूल है। ये

सब मेरे बड़े भक्त और अनुरागी हैं इन्हें मैं अपना खिलौना बनाय जैसा चाहती हूँ वैसा खेल खेला करती हूँ नाम मेरा अविद्या है—अशान्ति, स्वार्थपरता, निष्ठुरता, लोभ, मोह, बैर, फूट, इत्यादि कई एक और भी मेरे भाई-बहन, सखी-सहेली हैं जो सदा मेरे साथ रहती हैं जहाँ मैं जाती हूँ वहाँ ये सब भी पहुँच अपना डेरा छोड़ देते हैं। इन्हें आप सुखी मत समझें ये सब बड़े स्वार्थपर अविवेकी और निठुर हैं बहुत दिनों से मेरी उपासना करते-करते उन्हें ज्ञान ही न रहा कि सोच सकें कि चिरस्थायी सच्चा सुख इस संसार में क्या है। अपना सुख और आराम इनका सिद्धान्त है सर्वसाधारण प्रजा मात्र का लाभ और उपकार क्या वस्तु है सो ये जानते ही नहीं शरीर इनका हीरा जवाहिरों की जगमगाहट से चमक रहा है पर हृदय में गाढ़ा अन्धकार छाया हुआ है। महाशय ! जब तक मैं अपना अधिकार इनके बीच दृढ़ता के साथ जमाये हुये हूँ तब तक किसी तरह इनकी कुछ भलाई की आशा ही आप न करें और इन्हें बड़ा सुखी जो आपने मान रक्खा है इस सिद्धान्त को जलाञ्जलि दीजिये। इनकी यह सब रौनक और चमक-दमक केवल ऊपर से देखने ही को है भीतर-भीतर पोले और जर्जरित हो रहे हैं। स्वच्छन्दता का सुख इन्हें अणु-मात्र भी नहीं है ये कहने ही को राजा हैं राजस्व और क्षत्रियत्व का आभास-मात्र बच रहा है। इनमें एक भी ऐसे नहीं जिनको ब्रिटिश शासन सब ओर से आक्रमण न किये हो और जो ब्रिटिश सिंह के पंजे से छुटे हों। एजेंट साहब की खुशामद और सेवा में सदा तत्पर रहते हैं जिसमें कहीं ऐसा न हो कि प्रबन्ध में किसी तरह की खुचुर निकाल लाट साहब को लिख भेजें और हमारी प्रतिष्ठा में दाग लगे पदच्युत कर दिये जाँय। कोई आपस के घरैलू भाई बन्धु पट्टीदारी के झगड़ों में फँसे फिकिर में चूर

चूर हैं। कोई इस सब राजपाट का विलसने वाला अपने उपरान्त उत्तराधिकारी वलीअहद न देख राज-पाट विभव-सम्पत्ति सब फीकी मान रहे हैं। कोई ऊँची सी ऊँची पदवी और दरबार में प्रथम श्रेणी की कुरसी पाने की फिकिर में व्यग्र हैं। बहुत ऐसे भी है कि केवल अपना आराम और सुख चाहते हैं लाखों अपने आश्रितों की कुछ भलाई का ख्याल कभी एक मिनिट के लिये नहीं होता लोग कर्मचारियों के अत्याचार से पीड़ित चीत्कार मचाये हुये हैं पर उन्हें शरण देने वाला कोई नहीं देख पड़ता।

यह सब भीतरी बातें देख ऐसे सुख को धिक्कारते उस सुन्दरी से मैंने कहा देवी, मुझे अच्छी तरह अनुभव हो गया अब मैं कभी इस प्रकार के सुख को सुख न मानूँगा—आज्ञा दीजिये मैं कहीं अन्यत्र जाकर सुखी कौन हैं इसकी खोज करूँ। उसने उत्तर दिया—जाओ, पर मैं तुमसे इतना कहे देती हूँ कि इस शापित देश हिन्दुस्तान में इसकी खोजने की चेष्टा करना व्यर्थ है। यहाँ के रहने वालों की ऐसी करनी नहीं है कि वे सच्चे सुख केअधिकारी हों इतना कह वह अन्तर्ध्यान हो गई और मैंने भी अपनी राह ली। घूमते-घूमते ऐसे स्थान में जा निकला जहाँ की पृथ्वी उस देश के अत्यन्त शीतल होने से अनुर्वरा और पर्वत स्थली है पर वहाँ के परिश्रमी और साहसी निवासियों के कारण स्वर्ग-भूमि को तुच्छ करती है। जहाँ के नगरों की प्रासाद पङ्क्ति इन्द्रपुरी अमरावती की स्पर्द्धा कर रही है जहाँ के लोग सभ्यता, शिक्षा, शिल्प, विज्ञान और फेशन में लोकोत्तर हो जगत् भर के शिक्षागुरु बन रहे हैं। जिसके विक्रम, वैभव और समृद्धि की तुलना करने को अवनीतल के कोई देश समर्थ नहीं हैं। जहाँ की सफ़ाई, शिल्प चातुरी, वाणिज्य, युद्ध-विद्या, नीति पटुता, अपनी अन्तिम सीमा

को पहुँची हुई है। जहाँ की भाषा सम्पूर्ण भाषाओं का रसाकर्षण कर दर्शन इतिहास उपन्यास चरिताख्यान विज्ञान का भाण्डार-गृह हो रही है। जहाँ के लोगों का क्षोभ यहाँ तक बढ़ रहा है कि समस्त भूगोल हस्तगत होने पर भी लोभ एक स मा तक नहीं पहुँच सकता। यह सब देख मेरे मन में आया कि निःसन्देह इससे बढ़ कर कोई दूसरा ऐसा भाग्यशाली देश न होगा सकल सुख की खान यही है। यह सब अपने मन में कह ही रहा था कि मानो किसी ने आकर मेरे मन में कहा बन पड़े की सभी बात अच्छी होती है। तुम्हें अभी बहुत कुछ देखना है मत किसी सिद्धान्त पर आरूढ़ हो कूपमण्डूक बनो। इतने में मेरी आँख खुल गई भोर हो गया सूर्य की किरणें मानो हाथ पसार-पसार मुझे उठा रही हैं। पाठक, जिस बात की खोज में था उसका निश्चय तो न हुआ पर इस स्वप्न के देखने से आनन्द बड़ा मिला। आशा है आपको भी यह लेख पढ़ कुछ सुख मिले होगा।

जनवरी १८६७

# (१६) नई सभ्यता की बानगी

मैं बहुत दिनों से फेर में पड़ा था कि सभ्यता किसे कहते है। कई एक डिक्शनिरियां उलट-पुलट खूब छान-बीन की पर कहीं इसका पता न लगा। सभ्य लोगों के व्याख्यान और स्पीचों की बड़ी जाँच की वहाँ भी इसका सूराग़ न लगा। मन मे आया किसी पण्डित या मौलवी से पूछें तो कदाचित् मेरा मतलब निकल आवे इसी सोच-विचार में था कि अकस्मात् एक नई रोशनी वाले से भेंट हो गई। देर तक चुनाचुना के उपरान्त मैं ने उनसे पूछा—"भाई मुझे एक बात की शङ्का है हल कर दीजिये तो आपका बड़ा गुन मानें।" नई रोशनी वाले बाबू साहब बोले तुम लोग बड़े बेवकूफ होते हो। आज मुझे फुरसत नहीं है किसी एतवार को आना तो बतला देगें।" मैंने कहा—"थोड़ी सी तो बात है आप ध्यान लगा के सुनो तो कहूँ।" बाबू साहब बोले—"तुम लोगों से बातें करना अपना अनमोल समय व्यर्थ गँवाना है। ख़ैर, आज यही सही पर तुम मेरे साथ साथ चले चलो तो शायद मैं तुमसे बात करता चलूँ जिसमें मेरे वाकिङ्ग में खलल न पड़े"। गर्जमन्दा बावला मैंने सो भी मंजूर कर लिया। बाबू साहब आँधी-सा भागने लगे मैं उनके पीछे पतङ्ग का पुछल्ला सा लगा हुआ हाँफते-हाँफते पूछा कि "सभ्यता किसे कहते हैं?" उन्होंने कहा—"तुम्हारा सवाल बड़ा पेचीदा है मेरे साथ चले आओ अपने बङ्गले पर पहुँच इसे हल करूँगा।"

ख़ैर, ज्यों-त्यों किसी तरह बंगले पर पहुँच बाबू साहब छोटी हाज़िरी के लिये डाइनिंग रूम मे घुस गये। मैं बाहर बरामदे में एक कुरसी पर जा बैठा। थोड़ी देर में रुमाल से मुँह

पोछते बाबू साहब बाहर निकले और थके-थकाये टट्टू की तरह बरामदे में टहल-टहल बोले—"वेल! सभ्यता के बारे में आपने पूँछा था इसके क्या ठीक माने हैं सो तो मैं नहीं बतला सकता पर जो उदाहरण मैं देता हूँ उसी से समझ जाइये। "फ्रीडम" अर्थात् स्त्री और पुरुष दोनों परस्पर स्वतंत्र और निरपेक्ष बल्कि साहब और मेंम दोनो की स्वतंत्रता तराजू पर तौलने से मेम साहबा की आज़ादी का पलरा झुका हो। एक उमदा नमूना सभ्यता का यह भी है कि मेम साहब एक दिन भी रंड़ापे का दुख न उठाने पावें। मियाँ इधर क़बर में पहुँचे बीबी साहबा के लिये दूसरा तैयार। दूसरे स्त्रियों कों परदे में रखना सभ्यता में बड़ा भारी धब्बा है। सभ्यता जब जोर पकड़ती है तब पुरानी बात और पुराने ख़याल से घिन पैदा हो जाती है। जोश और तेज मिज़ाजी बे तरह तबियत में जगह कर लेती है। मनुष्य की विवेचना शक्ति (Conscience) पर वह बारीक सान धर जाती है कि ईश्वर के अस्तित्व तक में उसे सन्देह होने लगता है और मजहबी वसूल तो उस बारीक सान में कट-फट सौ टुकड़े हो जाते हैं और एक बात बड़ी गुप्त हम तुमसे बतलाये देते हैं उसे अपने मन ही में रखना वह यह कि वाइन सब सभ्यता का सार है बिना जिसके सभ्यता कभी शोभा देही गी नहीं। सभ्यता क्या है उसे अधिक जानना चाहो तो मिसटरीज़ आफ् लण्डन और पेरिस पढ़ो। बाबू साहब और भी तीन-चार किताबों का नाम अट-सट गिना गये।

सभ्यता की इन सब बातों को सुन मैं सन्नाटे में आ गया। पर मेरे चित्त को सन्तोष न हुआ खयाल में आया किसी मौलवी से भी इसे पूछूँ। शाम को एक मस्जिद के पास जा निकला और जो हज्ज किये हुये बड़े नमाज़ी आबिद मालूम हुये उनको जा घेरा और नम्रभाव से उनसे पूछा—

"मौलवी साहब ! मैं आपको थोड़ी तकलीफ दिया चाहता हूँ मुझको आपसे कुछ पूँछना है।" मौलवी साहब बोले—"कहो क्या पूछते हो।" मैंने कहा—"सभ्यता किसे कहते हैं ?"

मौलवी साहब चकरा गये कहने लगे—"मैं नहीं जानता तुम्हारी शैतानी काफ़िरों की ज़बान में यह क्या लब्ज़ है। मुझे समझाओ तो शायद तुम्हारा मतलब हल कर सकूँ।" अब मुझे और भी कठिनाई आ पड़ी कि मैं उन्हें किस भाँति समझाऊँ ! थोड़ा सोच बोले—"किसी जमात के दस्तूर या चलन को सभ्यता कहते हैं।" उन्होंने कहा—"भाई ! हम लोगों में तो यही दस्तूर है कि हिन्दू जो करते हों उसका उलटा और बरक्स करना, निहायत मैले और कसीफ़ रहना, नहाने-धोने का काई काम नहीं पर नमाज़ दिन में ६ दफे पढ़ना, शराब न पीना पर मदक और चण्डू में कोई हर्ज नहीं, बेवा को शादी हमारे यहाँ मना नहीं है पर दूसरे की खूबसूरत बहू बेटी देख पड़े तो उसे छीन लेने में कोई हर्ज नहीं और इसके बारे में मालूम करना हो तो लखनऊ या दिल्ली चले जाइये।"

इनकी बातें सुन मन में आया कि अब पण्डितों से पूछना चाहिये। काशी चला गया और मणिकर्णिका पर जा बैठा। एक पण्डितजी लम्बी धोती ढीले, सुँघनी का बेल हाथ में लिये, नंगे सिर, दुपट्टा कंधे पर धरे देख पड़े। मैं अति विनती भाव स प्रणाम कर बोला—"आज्ञा होतो मुझे कुछ जिज्ञासा है पूछूँ मैं प्रयाग से काशी का नाम सुन आया हूँ।" पण्डित जी ने कहा—"आप धन्य हो जो इतना श्रम उठाय यहाँ आये हो। कहिये आप का क्या प्रश्न है ?" मैंने कहा—"पण्डितजी सभ्यता किसे कहते हैं ?" पण्डित जी सुंघनी सूँघ न जाने कितने श्लोक पढ़ गये। मैंने कहा—"महाराज ! मुझे इतनी धारणाशक्ति नहीं है कि इन श्लोकों को याद कर सकूँ मुझे थोड़े में समझा

दीजिये।" पण्डित जी ने कहा—"सभ्यता समाज के शुद्ध आचरण को कहते हैं और यह अत्यन्त गर्हित है जैसे अब के नवयुवक पशुओं के आचरण योग्य काम को सभ्यता समझे हुये हैं। सभ्य हमारे रघुकुल मुकुटमणि श्रीरामचन्द्र और धर्मराज युधिष्ठिर महाराज थे। युग बदल गया, ब्राह्मणों पर श्रद्धा लोगों को न रही, धर्म के विरोधी सब हो गये, घोर कलियुग आने वाला है।" पण्डित जी की ये बातें सुन मैं सोचने लगा तो क्या अब देश का देश असभ्य और अधम हो गया सभ्यता कहीं रही न गई। जिससे पूछो वह अपनी ही गीत गा गये। सभ्यता चलन बाज़ार है जिसमें छोटे बड़े सभी नधे हैं। इतना अवश्य कहेंगे सभ्यता निरी चूना पोती क़बर है जिन्हें लोग सभ्य कहते हैं उनके भीतरी आचरण देख घिन होती है। हमीं अच्छे जो ऐसी घिनौनी सभ्यता के डाँड़े नहीं गये।

दिसम्बर १९०६

# (२०) दंभाख्यान

इस संसार महा गहन वन में सब ओर घासफूस से ढँपा हुआ दंभ एक ऐसा अन्धा कुआ है जिसमें मुग्ध करंग समान भीड़ के भीड़ मनुष्य निरावलंब गिर कर नित्य नष्ट होते रहते हैं। आप का मन इस अन्धे कुंये का पूरा दास्तान सुनने और दंभ देव के पुजेरियों से मिलने को ललकता हो तो हमारे साथ हो लीजिये चलिये हम इसका तमाशा आप को दिखावें। जल में मछली के समान दांभिक जन कितनी तरह की चाल चलना जानते हैं सब को एक साथ गिना कर आप को बतला देना तो हमारी अल्प-बुद्धि के बाहर है किन्तु जहाँ तक बन पड़ेगा कोताही न करेंगे। एक समय जब ब्रह्मा जो सब सृष्टि पैदा कर चुके और नेत्र फैलाय के देखा तो मनुष्यों को बिना किसी अवलंब के पाय सोचने लगे सृष्टि तो बड़ी उत्तम रचा गई किन्तु ये सब लोग जो सदा ऐसे ही सीधे-सादे निरे भोंदू दास बने रह गये तो मेरा सृष्टि पैदा करना व्यर्थ हुआ सो अब क्या करूँ जो इनमें चुस्ती और चालाकी आवे।

यह सब सोचते ही रहे कि अकस्मात् न जाने कहाँ से एक आदमी एक हाथ में बहुत सा कुशा और दण्ड लिये दूसरे में कमण्डलु, मृगचर्म ओढ़े, विभूति रमाये, कई तरह की माला पहने, मौन अवलंब किये पर हुँकार से ब्रह्मा के पास बैठे हुये मुनियों को डाँटता आ खड़ा हुआ। ब्रह्मलोक में भी छुआछूत के विचार से और हम सर्व श्रेष्ठ होकर पहिले बिना ब्रह्मा के अभ्यु-त्थान के बैठ जाँयगे तो बड़ी अप्रतिष्ठा होगी इस 'खयाल से खड़ा ही रहा। इसके रोब में आ कर ब्रह्मा अपने आसन से उठ खड़े

हुए अग्रस्त मानो इसके तेज से ग्रस्त से हो गये। बशिष्ठ अपने तपोवल को इसके सामने तुच्छ मान इसके वश में हो गये। कौत्स को अपनी सरल तपस्या पर नितान्त कुत्सा हो गई। आडंवर रहित अपने को देख नारद अपनी आत्मा का निरादर करने लगे। भृगु की सब तपस्या भग्न हो गई। ब्रह्मा ने कहा आप अच्छे आये हमारी सृष्टि में ऐसे एक तेजस्वी पुरुष की बड़ी आवश्यकता रही आइये आप हमारी जाँघ पर विराजमान हों। यह नाक भौं सिकोड़ते पहिले ब्रह्मा की जाँघ को गोबर से लिपवाय जा बैठा और बोला महाराज आप बहुत ऊँचे स्वर से न बोला करें हाथ का इशारा मात्र बहुत है और यदि बोलो भी तो हाथ से मुख ढाँप लिया करो जिसमें स्वास के साथ मुख की भाफ से मेरा शरीर अशुद्ध न होने पावे। इसके इस छुआछूत के विचार और अद्भुत आचार से ब्रह्मा तङ्ग हो हँस कर बोले हम जान गये तुम दंभ हो; उठो यह संम्पूर्ण समुद्रान्त पृथ्वी तुम अपनी हो समझो इसका सुख भोगो देवता लोग भी तुम्हारा तत्व न समझ सकेंगे। ब्रह्मा की आज्ञा पाय संसार के जीवों को अपने दंभ बल से अज्ञान तिमिर में झोंकता हुआ ब्रह्मलोक से नीचे उतरा और पृथ्वी के प्रत्येक प्रान्त में घूम-घूम सब ठौर अपना वैभव स्थापित करने लगा। चौके में पञ्च पौड़ों के दंभ आ कर घुसा चूल्हे में धूर्त कनौजियों के। केवल नहान और अपरस में कपटी नागर और गुजरातियों के। सोला में मूढ़ मालवीयों के। अर्थज्ञान शून्य पाठमात्र वेद जानने में मूर्ख महाराष्ट्रियों के। कलप किये धोये रील के चमकते जनेऊ में होटलिये बङ्गालियों के। रोजा और नमाज में तअस्सुबी मुसल्मानों के। रूप कसने में भिखारी पंडे देवलक और मन्दिर के पुजेरियों में। मौन साधने में गौं से चलने वाली गवर्नमेंट के। शमले में अमले और वकीलों के। फैशन में नई सभ्यता के।

नम्रता-पूर्वक गिड़गिड़ाने में कदर्य और कृपण महाजनों के। वाक् चपलता में पण्डितों के।

पाण्डित्ये चापलं वचः।

—घूँघट में कुलटाओं के।

अति विनयवामलतनुर्विलंघ्यते गेहदेहली न वधू।
अस्याः पुनरा रभटी कुसुंभवाटी विजानाति।

चार घड़ी के तड़के माघ तथा कार्तिक के नहाने यात्रा या दर्शनों में चपल जघनाओं को मर्दाने भेष में हमारी चालांक माई जी के। मंच-तंत्र टोना-टनमन में ताँत्रिकों के। जटाजूट और लम्बे तिलक में सन्त महन्तों के। इत्यादि; विविध नाम रूप से दाम्भिक जन लोगों को ऐसा फँसाने लगे जैसा मदारी अपने मन्त्र बल से साँप को। राग के तान से व्याध हिरन को फँसा लेता है। वगुला यावत् दांभिकों का सिरताज है और विलार को मानो दांभिकों का चक्रवर्ती है। लोभ इसके बूढ़े बाप हैं माया इसकी माँ है फूट और कपट सहोदर भाई हैं, हुंकार इसका पुत्र है वञ्चकवृत्ति इसकी समानशोला स्त्री है परिवार समेत दम्भदेव ब्रह्मा की आज्ञा का पालन करते सब ठौर घूमते फिरते हैं जीव कोटि में जन्म धारण कर जो इसके चंगुल में न आया वह धन्य है। दम्भ मक्कारी हिपोक्रिसी छल कुटिलाई बनावट पालिसी आदि विवध नाम रूप से यह ग्रहण किया जाता है।

संसार के कोई ऐसे काम न होंगे जिसमें दम्भ की थोड़ी छाया न आ पड़ती हो पर मज़हब या धर्म के सम्बन्ध में तो बिना दम्भ के कभी चलता ही नहीं। यूरोप के एक प्रसिद्ध विद्वान् का निश्चय है कि मज़हब की बुनियाद केवल दम्भ है और मत चलाने वाले सब दांभिक थे थोड़ा या बहुत सबों ने दम्भ का सहारा लिया है नहीं तो पृथवी पर इतने प्रकार के जुदे-जुदे मज़हब क्यों होते।

सच तो यों है कि संसार की चलाने वाली यह दम्भरूप जीविनी शक्ति इससे अलग कर ली जाय तो उचाट और ऊब पैदा करने वाले सूने जङ्गल के समान इस जाव लोक में फिर रही क्या गया सिवा सब ओर सन्नाटा ही सन्नाटा । यहाँ जो कुछ गुलज़ारी और रमणीयता है वह सब केवल दम्भ की झलक है ।

हम पहले लिख आये हैंकि माया दम्भ की जननी है माया को सांख्यदर्शन वालों ने प्रकृति कहा है और यह प्रकृति ही का अधिष्ठान है जिससे ब्रह्मा या जीवमें चेतना होती है तभी सृष्टि निर्माण चातुरी भी उसमें आती है अब आप समझ सकते हैं कि किस तरह दम्भ का लगाव सृष्टि के आदि ही से संसार के साथ लग गया है और बिना जिसकी झलक आये समाज मेंआप रूखे कठोर कटुवादी और अशिष्ट कहे जायेंगे । जी तो यही चाहता है कि आप से बोलने की कौन कहे आप की सूरत न देखें आप की गन्ध तक हमारे पास न आवे किन्तु अपना भीतरी भाव छिपाते हुये मिलने पर हँसकर दम्भ का आदर करते हुये आपसे न बोलैं राम रामौअल न करें गरुरी समझे जाँय कोई मुह से न बोलै ससार में रहना कठिन हो जाय । इत्यादि, भाँति-भाँति के रूपरङ्ग से संसार को चलते हुये दम्भदेव प्रकाशमान हो रहे हैं ।

अक्टूबर १८८६

# (२१) एक अशरफी का आत्मवृत्तान्त

आधी रात बीत चुकी थी १३ या १४ मिनट हुये होंगे कि बारह को गजल चारों ओर सुनाई देने लगी; सब सूनसान था परन्तु मुझे अभी तक निद्रा न आई बहुत जी ऊबा तो उठ बैठा पास मेज़ पर एक अखबार पड़ा था उठा लिया और चाहा कि लाओ इसे ही पढ़ें कि किसी तरह वक्त तो कटै। पासही उस अखबार के देखा तो एक अशरफी पड़ा है; उनींदासा तो था ही मुझे ऐसा मालूम हुआ कि वह अशर्फी अपने कगर के बल खड़ी हो गई और मेंरी ओर मुँह कर खखारने लगी—मैं इसी अर्द्धनिद्रा की दशा में इस अनोखे शब्द को सुन बड़ा चौकन्ना हो ध्यान दे जो शब्द वहाँ से निकले सुनने लगा और अशरफी ने अपना निज वृत्तान्त इस तरह पर कह सुनाया।

मैं एक पहाड़ की कन्दरा में जो अमेरिका के पीरू नामक देश के निकट है पैदा हुई और शिला रूप में सर फ्रांसिस डेक के साथ जहाज पर बैठ इंगलैंड पहुँची। जहाँ पहुँचते ही मैंने अपना चोला तज सफाई शाइस्तगी और चमकदारी का जामा पहिना; ठाट-बाट मेरे बिल्कुल अंगरेजी हो गये; महाराणी एलिज़बेथ मेरे एक ओर और देशी अस्त्र-शस्त्र मेरे दूसरे ओर रहने लगे। तब तो मेरी इतनी कदर हुई कि सबों को मेरे पाने की इच्छा होती थी। अब मुझमें चंचलता और घूमने की खाहिश बहुत ही बढ़ गई। मैं रोज़ नये-नये देश की सैर करने लगी और नये-नयें लोगों से मेरी मुलाकात भी बहुत बढ़ गई। मेरा अच्छा शील स्वभाव होने से लोग मुझसे ऐसा प्रसन्न थे कि पल-पल में मैं न जाने कितने मनुष्यों से हाथ मिलाती थी। जब मेरी अवस्था

पाँच वर्ष की हुई मैं इंग्लैंड के हर एक हिस्सों में घूम चुकी थी। छठवें वर्ष मेरे बड़ेही निकृष्ट ग्रह आये और मैं एक कंजूस के पाले पड़ी जिसने मुझे बड़े मज़बूत लोहे के सन्दूक में बन्द कर दिया। उसी बक्स में मेरे ऐसे पाँच सौ कैदी और बन्द थे। इस जेलखाने से हम लोग केवल दो बार सबेरे और साँझ निकाले जाते थे और बाद गिने जाने के फिर बन्द कर दिये जाते थे। हम लोग आपस में अपना-अपना वृत्तान्त कह सुन किसी तरह समय बिताते थे। तीन वर्ष-पर्यन्त हम लोग यह मुसीबत झेल उपरान्त एक दिन बे-वक्त हम लोगों ने अपने जेलखाने का ताला खुलने का आहट पाया। थोड़ा खटपट होने के उपरान्त तीन या चार बार बड़े जोर का शब्द हुआ जिससे हम लोग बहुत घबड़ा गये और ऊँचे स्वर से ईश्वर की आराधना करने लगे—"हे स्वामी! हमारी रक्षा करो"

हमारी इस बिनती और आर्तनाद पर सर्वान्तर्यामी ने कृपा की और उस ऐरनचेस्ट के खुलने पर एक महाशय नई रोशनी वाले नज़र पड़े यह हम लोगों की ओर देख मुसकिराये और कहा— आज हमारे पिता का जिन्होंने तुमलोगों को इतना सताया देहान्त हो गया आज से आप लोगों की भी रिहाई हुई। यह सुनते ही मैं खिलखिला उठी और उन्हें धन्यवाद दिया। और मेरे सब साथियों की क्या दशा हुई यह तो मुझे मालूम नहीं पर मैं तुरन्त ही एक शराबखाने की सैर ।करने को उन्हीं महाशय के बैरा के साथ गई; शराब वाले ने मुझे एक तरकारी बेचने वाले को दिया; उसने एक कसाई को दिया; कसाई ने एक रंगरेज़ को; रङ्गरेज़ ने मुझे अपने स्त्री को सौंपा; जिसके यहाँ मेरा एकही रात में जी घबड़ाया और मेरे बहुत गिड़गिड़ाने पर दूसरे ही दिन गिरजे में मुझे इसने एक पादरी साहब के हवाले किया। यह तो आप खूब जानते होंगे कि मैं बड़ी घुमन्ती होती हूँ और

आगे सुनिये। कभी तो मैं मिठाई, कभी खिलौने, कभी क्रुस्टमस कार्ड, कभी स्टिक, कभी गोल्डेन लीफ, और न जाने क्या-क्या मैं लाया करती थी। कई बार मैं लोगों के साथ थियेटर व सरकस देखने गई पर भीतर ले जाना न पसन्द कर गेट ही पर टिकट वाले के सुपुर्द मुझे उन्होंने कर दिया। जिसने दो या तीन मिनट तो रक्खा फिर उसने मुझे किराये के बदले एक Landou वाले को दिया। इस बादशाह की जेब में जाना मैंने स्वीकार न किया और फिसल कर नीचे गिर पड़ी। पर कहावत है:—

"जाको प्रभु दारुण दुख देहीं मति तांकी पहिले हरलेहीं"

मैंने तो जान बचाई पर इस भागाभूगी में मेरे ऊपर एक गाड़ी का पहिया फिर गया और मैं बिलकुल दबकर पिचन्नी हो गई। परन्तु कोई भारी घाव शरीर में न होने से जखम सब सूख गये और तीसरे दिन मेरे ऊपर एक सेलर की निगाह पड़ी उसकी जहाज उसी दिन हिन्दुस्तान को आने वाली थी बस फिर क्या उसके साथ मैं पिनाफोर नाम, जहाज पर वहाँ से रवाना हुई। धीरे-धीरे जहाज के सभी आदमियों से मेरी मुलाकात हुई और बम्बई के बन्दरगाह में जहाज के लगते ही मैं वहाँ से निकल भागी और एक मारवाड़ी महाजन के यहाँ पहुँच पन्द्रह रुपया कुछ आने की बिकी। अब मेरी उमर दो सौ वर्ष के ऊपर हो गई थी बहुत जीर्ण होने के कारण इत्तिफाक से टकसाल पहुँची और वह तन त्याग दूसरा पुनर्जन्म पाया। अब मेरे एक ओर महाराणी विक्टोरिया और दूसरी ओर (इतना कह अपनी पीठ दिखलाया) ये सब रहने लगे। हाँ, इतना कहना मैं भूल गई कि French Revolution के समय में फ्रान्स और Peninsular war के समय में स्पेन और यूरोप के सब हिस्सों में घूम चुकी हूँ।

७

हिन्दुस्तान में जन्म लिये मुझे ६७ वर्ष हुये इसका कोई हिस्सा नहीं बच रहा जहाँ मैं नहीं गई। इतना कहते उसे न जाने क्या याद आया कि बड़े जोर से हँसी और हँसते-हँसते लोट गई। मैंने उसे सावधान कर फिर खड़ी किया जब होश में आई तो मैंने फिर पूँछा कि तू क्यों इतना हँसी ? तब वह बोली मुझे एक वेश्या के घर जाना पड़ा था उसके यहाँ अच्छे लोगों की जो दशा होती है वह मुझे याद पड़ी इस लिये मुझे हँसी आई। यह घर वह पुण्य भूमि है जहाँ प्रवेश पाने के लिये लोग चोरी को पुण्य काम समझते हैं; जुआ को यज्ञ के तुल्य मानते हैं; माता पिता बन्धु भाई स्त्री सब को त्याग इस परमेश्वरी का उगाल दान उठाना अहो भाग्य मानते हैं। खूब अच्छी तरह समझे रहिये इनको भी मैंने ही अपने वश में कर रक्खा है जिसपर मैं नहीं कृपा करती वह कितना ही लम्ब शाट पटा वृतः हो यह उसकी ओर कभी आँख उठाके नहीं देखती। डोम भी हो पर मेरा कृपा पात्र है तो ये उसकी जूतियाँ तक उठाने में कभी बुरा नहीं समझतीं। पाठक, महाशय मैं तुम्हें सचेत करतो हूँ कि तुम कभी इनके भ्रमजाल में न पड़ो नहीं तो ये तुम्हें जहाँ तक निचोड़ते बन पड़ैगा कसर न करैंगी और तब तुम्हें शव तुल्य अस्पृश्य समझ त्याग देंगी। और भी वह कुछ कहा चाहती थी कि अचानक तोप छुटने का शब्द मेरे कान में आया मैं चौंक पड़ा और देखता हूँ तो सुबह हो गया। सामने धरम घड़ी में छोटी सुई छः पर पहुँची और ६ बजने लगे। नींद को खुमारी में तो था ही चारुदत्त के कथानक के सम्बन्ध में शर्विल के कहे हुये श्लोक मुझे याद आये:—

इह सर्वस्वफलिनः कुलपुत्रमहाद्रुमाः। निष्फलत्वमलं यान्ति वेश्याविहगभक्षिताः।

एता हसन्ति च रुदन्ति च वित्तहेतोर्विश्वासयन्ति पुरुषं नतु विश्वसन्ति। तस्मान्नरेण कुलशीलसमन्वितेन वेश्याः श्मशान सुमाना इव वर्जनीयाः।

इयं च सुरतज्वाला कामाग्निः प्रणयेन्धनः। नराणां यत्र हूयन्ते यौवनानि धनानि च।

सितम्बर १६००

# (२२) वकील

यह जानवर ब्रिटिश राज्य के साथ ही साथ हिन्दुस्तान में आया है। पुराने आर्यों के समय इनका कहीं पता भी नहीं लगता। मुसलमानों की सल्तनत में वकील वही कहलाते थे जो छोटे राजा या रईसों की ओर से किसी चक्रवर्ती बड़े राजा के दरबार में रहा करते थे पर किसी न्यायकर्ता के सामने बादी प्रतिवादी की ओर से अब के समान बादानुबाद से उस वकील को कोई सरोकार न था। वास्तव में अंगरेज़ी शासन ने इस पेशे को बड़ी उन्नति दिया। सच पूछो तो यह एक परम स्वच्छन्द व्यवसाय है और बड़ी बुद्धि का काम है। कोई ऐसा विषय नहीं है जिसको कभी न कभी वकील को अच्छी तरह जान लेना नहीं पड़ता। कभी इसे राजकीय विषयों में घुसना पड़ता है कभी को वाणिज्य और तिजारत को ऐसा जानना पड़ता है जैसा किसी ने जन्म भर वही काम किया हो। कभी ज़िमीदारी का रस विना अंगुल भर ज़मीन अपने अधिकार में रखने के भी उसको चखना या अनुभव करना पड़ता है। इस पेशे की आमदनी का कुछ ठिकाना नहीं है जिसकी दूकान चल गई लक्ष्मी उसके सामने हाथ जोड़े खड़ी रहती हैं। जिसकी न चली उसको रोज़ रोज़ा रखना पड़ता है रोज़ी उसको दुर्लभ हो जाती है। जिसका काम चलता है नहीं भी चलता उसका वह हाल रहता है जैसा जुआरी का। दाँव पड़ता गया नया गहनापाती खाना कपड़ा सभी कुछ बढ़िये से बढ़िया तैयार हो गया। न पड़ा तो पेट में चूहे उछला किये किसी को मुँह दिखाने में शरम होती है। बहुतों की समझ है कि इस काम में पुलिस की नाईं झूठ ज़रूर बोलना

पड़ता है पर यह किसी तरह सच नहीं है। हमने अच्छे-अच्छे तजरिबेकार वकीलों से सुना है कि वकीलों की विजय नामवरी और प्रतिष्ठा सत्य ही से होती है। बहुत लोग कहते हैं इस पेशे में मेहनत नहीं करना पड़ता है यह भी मिथ्या है। मन और मस्तिष्क दोनों को बड़ा परिश्रम पड़ता है दूसरे का दुःख अपना समझ उसको दूर करने के लिये भिड़ जाना पड़ता है। मसल है एक गरड़िये के ऊपर भेड़ चुराने का अभियोग लगाया गया। गड़रिये के वकील साहब ने जज के सामने बहस कर उसे छुटा लिया। गड़रिया और उसका मित्र दोनों घर लौटे आते थे मित्र ने पूछा—भाई, सच बतलाओ तुम ने भेड़ चुराया था या नहीं? उसने कहा, भाई चुराया तो था पर जब से वकील साहब की बात सुना तब से मन में सन्देह है कि हमने सचमुच चुराया था या नहीं।

वैद्यों ने निश्चय किया है वीर्य के क्षय से भी बाणी का क्षय अधिक निर्बल करता है सो वकालत के पेशे में कितना बकना पड़ता है इसकी कोई हद नहीं है तब वकीलों के परिश्रम का क्या कहना ! सच तो यों है कि जिन लोगों ने अदालत की सैर की है वे जान सकते हैं कि वकील कितनी मेहनत करते हैं और कितना मुअक्किल का उपकार अदालत में इनसे होता है। जब दो वकील तीतर-बटेर से लड़ते हैं तब जो सुनने वाले होते हैं वे प्रायः दो तरह के होते हैं या तो बादी से उनका संबन्ध रहता है या निरे तमाशबीन होते हैं जो केवल दिल-बहलाव और शैर के लिये अदालत गये थे। जो दो फरीक में किसी एक के संबन्धी होते हैं वह अपने वकील की तकरीर सुन प्रसन्न हो जाते हैं उसके पत्येक शब्द को वेद वाक्य मानते हैं और प्रतिबादी के वकील की तकरीर बड़े क्रोध से सुनते हैं यहाँ तक कि बस चलै तो मार बैठैं। जो शैर सपाटे के लिये गये हैं वे

अचंभे में आजाते हैं कि दोनों देखने में प्रतिष्ठित हैं पर सच्चा दो में कौन है। फौजदारी हो चाहे दीवानी हो अपने मुअक्किल की बात पुष्ट कर देना और सत्य को चमका देना वकील ही का काम है। इङ्गलैंड में एक राजवधू ने राजकुमार पर अभियोग किया राजवधू के वकील ने अपनी वक्तृता में कहा हम लोगों का काम शुद्ध और पवित्र है हमको केवल अपने मुअक्किलों की बात सिद्ध करना है। यद्यपि मैं इस समय इस देश के राज कुमार पर अधिक्षेप कर रहा हूँ इसका मुझे कुछ भी चित्त में संकोच नहीं है जिसका मैं वकील हूँ उसके फ़ाइदे पर मेरी दृष्टि है चाहे देश का देश विरुद्ध हो जाय तो मैं उसे कुछ खयाल न करूँगा।

सच तो यों है देश के उद्धारक इस समय ये वकील ही देखे जाते हैं। बड़े-बड़े राजकीय विषयों के समझने और उस पर तर्क-वितर्क, ऊहा-पोह करनेवाले यही तो देखे जाते हैं वैसेही इनका स्वच्छन्द व्यवसाय भी है कि औरों के समान ये गवर्नमेंट या कर्मचारियों के वाधित नहीं हो सकते। धैर्य हिम्मत साहस ये तीन बातें इस पेशे की जान हैं। अच्छा लायक वकील चलता-पुरजा वही होगा जिसमें ये तीनों बातें होंगी। गवर्नमेन्ट कानून हिन्दी की चिन्दी निकालते हुये मुल्क की तरक्की में मानों जहरसा घोल रही है उसका "ऐंटीडोट" प्रतीकार ये वकील ही हैं। बड़े बड़े शहरों की शोभा हैं जो चलते बने तो औवल दरजे की प्रतिष्ठा का द्वार है। पर सोच होता है जब खयाल करो कि बन्दर के हाथ में मणि के समान कितने इस पेशे को ऐसा बिगाड़ रहे हैं कि वकील झूठ को सच सच को झूठ कर देने के लिये बदनाम हो रहे हैं सो न किया जाय तो वक़ालत आदमी को अपनी इज्जत बनाने के लिये बड़ा उमदा जरिया है। वह ज़माना गया जब वकीलों की तवायफ़ के साथ तुलना दी जाती

थी। अब इस समय सभ्य सुशिक्षित जिन्होंने अंगरेज़ी की उमदा तालीम पाई है उनको अपने उत्तम गुण शौलील्य, सौजन्य, सच्चाई, ईमानदारी के प्रगट करने को यह काम एकमात्र सहारा है और अंगरेज़ी राज्य में बड़ी उत्तम जीविका है चलते बन पड़े तो। इत्यादि।

जुलाई, १८९८

# (२३) अकिल अजीरन रोग

इस अकिल अजीरन रोग ने किसी को नहीं छोड़ा तमाम तिब्ब और वैद्यक छान डाला इसका इलाज कहीं न पाया। चाहे कोई कितना ही विशाल-बुद्धि हो एक न एक अकिल अजीरन का पुछल्ला पीछे लगाही रहता है। सब के पहले हम अपने हा को जाँचते हैं। मन में तय किये बैठे हैं कि हम अगाध बुद्धि के महा महासागर हैं, सच्चरित्र की ऐसी कसौटी तो कहीं ढूँढ़ने से भी मिलना कठिन है, इसलिये सर्वजन हितैषी होने की प्रगाढ़ इच्छा ने जो ज़ोर किया तो अकिल का अजीरन हो गया और यह बेहूदापन गाँठ बाँध लिया कि एडिटर बन पर उपदेश कुशल बनें। अपने हिन्दुस्तानी भाइयों का सब भद्दापन दूर कर इन्हें कुन्दन-सा निखालिस और चमकीला कर दें"

"प्रांशुलभ्ये फले मोहादुद्बा हुरिव वामनः"

चढ़ाव-उतार के साथ ऊँचा-नीचा समझाते उमरकी उमर खे डाला पर कुछ असर न हुआ किसी एक बात में भी इन्हें सुधार करते न पाया। स्वराज की उत्कट बांछा अलबत्ता ज़ोर पकड़ती जाती है। कभी एक बार भी मन में नही धँसता कि हमारी इस सामाजिक गिरी दशा में स्वराज की बासना कितनी हास्यास्पद है। विद्या और बुद्धि वैभव में वाचस्पति के भी बाबा हमारे युवक जो निस्सन्देह देश की भावी भलाई के अंकुर हैं, जिनका नया जोश नई तालीम, नई रोशनी, नई उमंग सब मिल एक ऐसा नये तरह का अक़िल अजीरन उनमें पैदा कर दिया जिससे पुराने खयाल वालों की गन्ध भी उन्हें नहीं सोहाती। इन पुरानों को चाहता था

कि वे दरीना बुज़ुर्ग और बहुदर्शी थे इन नयों की कदर करते सो उनके वज़बजाते हुये सड़े दिमाग़ में जिसकी याद करते. उकलाई आती है इन नयों की नई रोशनी धसती ही नहीं तब क्यों कर उनका अन्धकार दूर हो। जन्म-जन्म का कोढ़ साफ़ होते-होते होगा आज हा सब कैसे हट जाय। इन नये और पुरानों को अक़िल अजीरन ने हमारी हिन्दू समाज को डावांडोल में छोड़ नौका समान मझधार में डुबो रही है।

"हरहटों की लड़ाई में कपिला का विनाश"

हमारी वर्तमान गवर्नमेंट अपने को इनसाफ़ पसन्द न्याय-शील और उदार प्रसिद्ध किये हैं पर अक़िल अजीरन का पुछल्ला ऐसा उसके साथ लगा है कि जिससे उसके कर्मचारी गण यह कभी सोचते ही नहीं कि स्वजाति पक्षपात के मुकाबिले न्याय और उदार भाव उनके कामों से सिद्ध होता है? वरन सदा इसी कोशिश में लगे रहते हैं कि हिन्दुस्तानी उभड़ने न पावें। सरकार के राजकीय प्रबन्ध और मुल्की इन्तिज़ाम सब सराहने योग्य हैं। हर एक महकमों के अकिल का अजीरन जुटते-जुटते पुलिस सिस्टेम बन गया जिससे सरकार के न्याय में बट्टा लगने के अलावा अंग-रेज़ी राज अत्याचार और बिद्दत करने में नवाबी का भी कान काटे हुये है। बेद के समय के हमारे पुराने आर्य ऋषि बड़े बुद्धि-मान् तपस्वी पवित्र चरित्र और सकल विद्या पारंगत थे पर अकिल अजीरन ने उन्हें भी न छोड़ा। अपने सन्तान ब्राह्मणों को दक्षिणा लेने का पूर्ण अधिकार दे गये और लिख गये कि:—

"अविद्यो वा सविद्यो वा ब्राह्मणो मामकी तनू"

भगवान् कहते हैं—"ब्राह्मण लिखा-पढ़ा हो चाहे अपढ़ हो हमारी देह है" "अग्निमें होम करने से हम इतना सन्तुष्ट नहीं होते जैसे ब्राह्मणों के भोजन और दक्षिणा देने से। यह न सोचा पीछे

यह दक्षिणा उनके लिये जहर हो जायगी। दक्षिणा के सहारे ये पढ़ना-लिखना सब छोड़ बैठेंगे और नितान्त वेक़दर हो

"पीर बवर्ची भिश्ती खर"

बन बैठेंगे। दक्षिणा की आशा से सबों के सामने हाथ पसारना कैसा घिनोना काम है पर हमारे ब्राह्मण भाई इसे बड़ा प्रतिष्ठित समझ रहे हैं। अच्छा किसी ने कहा है:—

"नित्यं प्रसारितकरः करोति सूर्योपिसन्तापम्"
"नित्यं प्रसारितकरो दक्षिणाप्रसादकः"
"न केवलमनेनैव दिवसोपि तनूकृतः।"

कर के माने किरन और हाथ के भी हैं। सूर्य ऐसे तेजस्वी भी नित्य "कर" किरन दूसरे पक्ष में हाथ पसारे रहते हैं तो वह भी सन्ताप देते हैं। हमने अनुभव पूर्वक इसे देख लिया है कि जब तक कर के नीचे कर रखने की आदत ब्राह्मणों की दूर न होगी और सदा वेहने-धुने का इन्हें मिलता जायगा तब तक ये कभी न चेतैंगे। जिस दिन निद्रा विसर्जन कर परशुराम के सामने ये चेत उठेंगे उसी दिन देश का दुख दरिद्र दूर हट स्वराज सहज में मिल जायगा। कोई अवतारिक पुरुष पैदा हो कि दक्षिणा माँगना इनका छुटा दे तो बड़ा उपकार हो।

कहाँ तक कहें इस अकिल अजीरन ने ईश्वर तक को नहीं छोड़ा। सृष्टि रचना करते समय उसकी कारीगरी में जो कुछ भद्दापन आता गया वह सब कूड़े के समान इकट्ठा होता गया और कूड़ों का ढेर का ढेर Embodied मुजस्सिम आकृतिमान् हो इल्लटरेट सेठ के आकार में परिणत हो गया। दूसरे यह कि अकिल का अजीरिन नहीं तो इसे कौन शऊरदारी कहैगा कि उड़ीसा में तो इतना पानी बरसै कि देश का देश बह जाय देश के और हिस्सों में कहीं कसम खाने को भी श्रावण के उपरान्त

बूँद धरती पर न आवे। सबेरे ही से बारहों सूर्य इकट्ठे हो जो आँख फाड़ एक टक चितौने लगे तो दो महीने तक पलक न भाँजा खेती सब एक दम ठाँव ही पटपटाय रह गई। पशु सब तृण के अभाव से संयमिनी पुरी के पाहुने होने लगे। गल्ले के रोज़गारियों की बन पड़ी रेलोत्रादर्स के ढो ले जाने से जो बच गया उसे मोतियों के भाव बेचते हुए रुपये से अपना घर भर लिया। मारे खुशी के पेट उनका नगाड़ा-सा फूल उठा।

"क्वचित् दोषो गुणायते"

दैव का यह अकिल अजीरन उनके लिए पारस हो गया

"किसी को बैगन बावले किसी को बैगन पथ्य"

वाली कहावत ठीक उतरी। अन्त को यही कहने का मन होता है कि सब रोगों में अकिल अजीरन लाइलाज मर्ज़ है और कोई नहीं बचा जो ईश्वर की विचित्र रचना में इस बीमारी में मुबतिला न हो।

मार्च १९०९

## (२४) इङ्गलिश पढ़ैं सो बाबू होय।
## जाति पाँत पूछै नहि कोय॥

देश में अङ्गरेजी शिक्षा और अङ्गरेजी सभ्यता के साथ ही साथ बाबू शब्द का भी प्रादुर्भाव होने लगा और अब तो यहाँ लौ राइज हो गया है कि हिन्दू मात्र बिना किसी निरख के चाहे जो हों बाबू कहे जाते हैं। हमारा पुराना लाला शब्द जो सर्व साधारण में केवल खत्री वैश्य और कायस्थ के लिये इस्तेमाल में आता था सरकारी अमलों में सिर्फ कायस्थों ही के लिये राइज है सो अब बाबू शब्द वृहद् ब्रह्माण्डवत् व्यापक हो लाला को तो अन्तर्गर्भित कर ही लिया लम्बी उछाल मार बहुत आगे जा कूदा। अङ्गरेजी चार अक्षर जरूर पेट में पड़ गई हो चाहे जो हों बाबू हैं।

सब धान बारह पसेरी

धोबी कहाँर से लै ब्राह्मणों में षटकुल और चित पावन तक सब इस बाबू के बड़े भारी लम्बे दायरे के अन्तर्गत हैं।

यह बाबू उपाधिधारियों के नाम की टिप्पणी हुई, अब बाबुओं के काम का विवरण करते हैं। इजिन ड्राइवरों की तरह मुख्य काम बाबू का कुइल ड्राइवरी का है जिसका दूसरा नाम बाबूगीरी भी है। बाबू के साथ साहब लग जाने से मानों गोटसी लग गई कोई झगड़ा ही न रहा। किसी दफ्तर के हेड-क्लर्क या किसी दूसरे महकमे के बड़े से बड़े बाबू; कारगुजारों में अव्वल सब के सिरताज समझे जाते हैं। अकेले बाबू शब्द से अलबत्ता बड़े से बड़े वकील से दस रुपये महीने का मुहर्रिर

तक सब बाबू हैं पर अङ्गरेजी तालीम का उनके साथ भी नित्य सम्बन्ध है। बाबू कहलाने वाला अंगरेजी जरूर पढ़ा हो। अहल यूरोपवालों के बीच बाबू एक हिकारत की लव्ज़ समझी गई है जैसे बाबू लाइक इंगलिश कैसी ही शुस्ता अङ्गरेजी चुस्त इबारत में लिखी हो पर यह मालूम हो जाय कि किसी हिन्दुस्तानी का यह लेख है तो हमारे साहबान अहल विलाइत पायोनियर ऐसे उसे बाबू लाइक इंगलिश कहा करते हैं। बाबू शुद्ध हिन्दुस्तानी हैं हमारे अङ्गरेज़ महाशय ज़रा ज़बान को टेढ़ी कर जब इसे बोलते हैं तब यह टकसाली अंगरेजी हो बाबू का व्याबू बन जाता है और एक न अन्त में और जोड़ देने से यह "व्यबून" बन्दर या बनमानुष बन जाता है।

हमारे पुराने वैयाकरणी और अलंकारिकोंने अभिधा लक्षणा व्यंजना शब्द की ३ शक्ति माना है। व्याबू शब्द में न के जुड़ जानेसे एक शक्ति और नई पैदा होजाती है जो इनसान को आदमी से बन्दर बना देती है। बाबू में आन लगा दो बबुआन छोटे मोटे राजा का बोधक होता है। खाली आं रक्खो बबुआ दूधमुहे बालक का बोध करावेगा। पर अमूमन तो बाबू वेही हैं जो अपने "सुपीरिअर" हाकिम बाला की घुड़की और झिड़की सहने में प्रवीण हों; गुलामी में रहते रहते गट्ठे पड़ गये हों दस रुपये की भी नौकरी मिल गई मानो शाही तख़्त मिला जन्म सफल होगया किस्मतबरों में सब के अगुआ हो गये। अरज़ी हाथ में लिये बंगले बंगले बरसों तक घूमते-घूमते तलुवे की ख़ाल घिस गई, उम्मैदवारों में नाम दर्ज कराय ताकते ताकते आँखें झैं गई नौकरी न मिली, सो नौकरी शिफ़ारिस महामंत्र के अनुष्ठान से तुर्त-फुर्त दस्तयाब हो गई तो अब किस्मतवरी और कैसी होनी चाहिये। इत्यादि, बाबू के काम के बिबरण में चाहे पेज का पेज रंगते चले जाइये रामर-

रसरा न चुकै। खुलासा सब का यही है कि बाबूगीरी के लिये लायक से लायक वही है जिसकी तबियत में जोश ने जगह न न किया हो और दास्य-कर्म में अतिकुशल हो।

अगस्त १८६६

## ( २५ ) नहीं

यह भी क्या ही विचित्र दो अक्षर का शब्द है जिसे कोई कभी नहीं पसन्द करता। बहुतेरों का तो यह खयाल है कि संसार रूपी पुस्तक से ये दो हर्फ छील दिये जावे तो अच्छा होता। जो कोई किसी से कुछ कहता है, पूँछता है, माँगता है, तो उसके मन में यह शंका काँटा सी चुभती रहती है कि उत्तर में उसे ये दो हर्फ कहीं न मिल जाँय। इतिहास और पुराणों में देवताओं का एवमस्तु सुना जाता है और उस एवमस्तु से जो-जो अद्भुत बातें देखने में आई हैं वह भी किसी से छिपी नहीं हैं। वरप्रदान रूप एवमस्तु से संसार में जो-जो सुख लोगों को मिले हैं वह भी सब लोग जानते हैं। पर नहीं इन दो अक्षरों से भी किसी को कुछ सुख मिला है कभी सुनने में नहीं आया। गौरांगों में विवाह की जड़ इन्हीं दो अक्षरों का उलटा है अर्थात् पुरुष स्त्री से "ईश्वरीय भवन" गिरजा घर में पूँछता है तू मुझको अपना पति होना स्वीकार करेगी ? उन दोनों का जन्म-पर्यन्त एक मन दो तन होने का और आजन्म साथ रहने का दारमदार इन्हीं दो अक्षरों का उलटा उत्तर अर्थात् हाँ है। कहीं ये दो अक्षर उस समय स्त्री के श्रीमुख से निकल जाँय तो जिनमें यह व्यौहार प्रचलित है उनमें स्त्री और पुरुष का नाता ही न पैदा हो सृष्टि की रचना ही रुक जाय। डूब कर देखिये तो संसार में इस नहीं की नहीं होना ही भलाई है।

किम्बदन्ती है कि एक धर्मिष्ट न्यायपरायण राजा भेष बदल एक रात को नगर देखने निकला। घूमते-घूमते एक पेड़ के नीचे दबके खड़े हुये उसे चार आदमी मिले, राजा को देख वे चारों

भयभीत हो बोले अरें तू कौन है ? राजा ने जवाब किया जो तुम हो सो हम हैं। राजा का ध्यान उस समय ज्ञानकाण्ड के मार्ग में था जिसका तात्पर्य यह हुआ कि मनुष्य मात्र सब एक हैं। पर वे चारो जो वास्तव में चोर थे राजा के कहने को अपने मतलब में झुका लाये और बोले आज भादों की १४ है नन्हीं-नन्हीं झीसिसाँ पड़ रही।हैं शीतल मन्द समीरण बह रहा है चलो किसी बड़े घर को मूसें। एक ने कहा चलो आज इस नगर के राजा के यहाँ सेंध दें। रनवास में जड़ाऊ सोने चाँदी के भूषण बसन बहुत हाथ लगेंगे। एकही बार की चोरी में अमीर बन बैठेंगे। राजा ने कहा—अच्छा, हम भी साथ चलेंगे पर बतलाओ आप लोगों में क्या-क्या गुण हैं। एक ने कहा हमे रुत ज्ञान है अर्थात् हम चरिन्द-परिन्द सबों की बोली पहचान सकते हैं, कि वे क्या कह रहे हैं। दूसरे ने कहा हमें ऐसी स्मरण शक्ति है कि जिसे एक वार देख लेते हैं उसे फिर कभी नहीं भूलते। तीसरे ने कहा हम गड़ा धन बतला सकते हैं। चौथे ने कहा जहाँ कहीं धन हो हम निकाल देंगे। उपरान्त चारों ने राजा से पूछा तुम्हारे में क्या गुण है ? राजा घबड़ा गया और बोला मेरा नहीं संकट मोचन है आदमी को फाँसी होती हो हम नहीं कहैं वह फाँसी से छुट जाय। पाठक ! याद रहे ऐसी "नहीं" संसार में अत्यन्त बिरली है। अस्तु, चारों चोरों ने पाँचवें राजा समेत राजमन्दिर के ओर जाय रनवास में सेंध दिया। राजा ने उन चारों से कहा इस अपरचित घर में मैं भटकता फिरूँगा इसलिये मैं सेंध के वाहर रहूँगा, तुम लोग जो भीतर से लाय मुझे दोगे उसे मैं इकट्ठा करता जाऊँगा। जिस समय वे पाँचों राजमन्दिर की ओर जा रहे थे कुत्ता भूकने लगा। उन चारों में से तीनों ने उस रुतज्ञानी से पूछ कुत्ता क्या कह रहा है। रुतज्ञानी ने उत्तर दिया कुत्ता यह पुकार रहा है ये पाँचों चोर नहीं हैं किन्तु एक

उनमें से इसी शहर का राजा है। इस पर सब लोग हँस पड़े कि कुत्ता बावला है चलो चलें अपना काम करें। राजमन्दिर में पाँचों जब गये तो वहाँ सब लोग सो रहे थे। वह मनुष्य जो जान लेता था कि धन कहाँ है बताने लगा और लोग ढो-ढो कर राजा के पास लाय रखने लगे। इसी अवसर में राजा ने कोतवाल को खबर दी कोतवाल ने आय उन सबों को पकड़ लिया चोरों को अचरज भया कि वह पाँचवाँ कहाँ गया फिर समझा दौड़ आते देख भाग गया होगा। दूसरे दिन कचहरी में चारों लाये गये। प्राड्विवाक अर्थात् जज ने हुक्म दिया चारों का सिर काट लिया जाय! चारों राजा की ओर देख विस्मत हो गये। जिसे स्मरण शक्ति थी वह राजा को सिंहासन पर बैठा देख बोला यह जो सिंहासन पर बैठा है उसे हम ने कहीं देखा है। रुतज्ञान वाले ने भी कहा ठीक है कुत्ते ने भी ऐसा कहा था। जब गारद के सिपाही उन्हें वध्य स्थान में ले चले तो उन सबों ने कहा हम लोगों ने अपना-अपना गुण प्रगट कर दिखाया आप अपने संकट मोचन वाले गुण 'नहीं' को कब प्रगट कर दिखावेंगे। यह सुन कोतवाल राजा को ओर अचरज में आय देखने लगा। राजा ने कहा "नहीं" सारांश यह कि अन्त में सब छूट गये। पाठक! इस विरली "नहीं" का दृष्टान्त हमने आपसे कह सुनाया।

विचार कर देखिये तो संसार में एकही "नहीं" ऐसी है जो बड़ी मीठी और प्यारी है जिसे आदमी यावज्जीव नहीं भूलता अर्थात् नवोढा के प्रथम समागम में जहाँ "हाँ" किसी को कम भावती है।

असंमुखालोकनमाभिमुख्यं निषेध एवानुमतिप्रकारः।
प्रत्युत्तरं मुद्रणमेव वाचो नवांगनानां नव एव पन्थाः॥

जुलाई १८९८.

# (२६) बिना भाव

भोगविलास धन सम्पत्ति अनेक प्रकार का वैभव आराम आसाइश इत्यादि सब सुख एक ओर। गरीबी अकिञ्चनता अन्न-वस्त्र का कष्ट सहनपूर्वक दुःख जीवन दूसरी ओर। ये दोनों वास्तव में कुछ नहीं हैं वरन इसी बिना भाव के संकोच और बिकाश हैं। इससे विकाश हम इसलिये कहते हैं कि सन्तोष को मन में विना जगह दिये यह बिनाभाव किस ओर-छोर तक बढ़ता रहेगा कि जिसकी सीमा नहीं है उसके सिमटने के लिये इस अखण्डब्रह्माण्ड का एकाधिपत्य भी पर्याप्त नहीं है। अब संकोच इसे इसलिये कहते हैं कि सन्तोष जहाँ मन में आया कि इसकी जितनी ख्वाहिशें और हिर्सहवा सब कछुये के पाँव के माफिक सिमिट जाती हैं इस समय की मन की दशा को चाहे शान्ति कहो, चाहे उदासी कहो, चाहे दैन्य कहो, या घी ढरक जाने पर रुखी दाल को मजादार कहने वालों की ताईद मानो, चाहे इसे मन का समझौता कहो, चाहे शुष्क वेदान्तियों का सन्तोष मानो।

एक हिन्दुस्तान ही ऐसा अभागा देश है जहाँ बिना भाव के सकोच ने इस कदर पंजा फैला रक्खा है कि उत्साह उमङ्ग जोश सब एक साथ विदा होगये। तरक्की और आगे बढ़ना सपने के से खयाल हो गये ज़हर के समान रग-रग में यह ऐसा व्याप्त हो रहा है कि लोगों की तबियत में उभाड़ होता ही नहीं। चौबीस घण्टे में एक बार भी रुखा-सूखा अन्न आधे पेट भी मिल जाय और चिथरा गुदड़ा भी तन ढाँपने को मिलता रहे तो उतने ही से सन्तोष करलें। वही दुनिया के और और मुल्क हैं जहाँ

सभ्यता और तरक्की इस अन्तिम सीमा तक पहुँच चुकी है फिर भी बिना भाव का विकाश बढ़ता ही जाता है।

एक समय वह था कि मखमली बिछौना भी देह में चुभता था आवरवाँ तनजेब मलमल गड़ता था और बड़ा बोझा मालूम होता था। तकल्लुफ का षट्रस भोजन किसी एक मसाले के ज़रा से घटबढ़ में फीका और बदज़ाइके मालूम होता था। बदकिस्मती से ऐसा एक जमाना आगया कि टाट बिछौना और कमली ओढ़ना कंकड़ों पर बिछा के सोते हैं तो वह घर्राटे की नींद आती है कि जिसके लिये साटन और मखमल से मिढ़ी कोच पर सोने वाले तरसते हैं। सच है "निद्रातुराणां न च भूमिशय्या" कमलो का ओढ़ना तनजेब और मशरूम को मात करता है जहाँ षट्रस भोजन में जाइका नहीं मिलता था वहाँ अब सूखे चने और ज्वार की रोटी खाली नोन के साथ अमृत मालूम होती है।

"क्षुत्स्वादुतां जनयति"

पहले तोले भर बालाई में अजीरन हो जाता था अब पत्थर के टुकड़े भी खालें तो पच जाँय "गत सुखी संसार" इस कहावत की सचाई ऐसेही ऐसे मौकों पर प्रत्यक्ष होती है। सुकुमारी सीता जिनके कोमल चरणों की महाउर का रङ्ग भी बोझ था राजकुमार राम लक्ष्मण जिनको दूध के फेनसी कोमल शय्या पर नीद नहीं आती हाय नंगे पाँव दंडक बन की कटैली पथरोली पृथ्वी पर घूमते हुये क्योंकर चौदह वर्ष पार करैंगे महाराज दशरथ ने इसी शोक में तन त्याग दिया। किन्तु, इसी गत सुखी संसारवाली कहावत के अनुसार हमारा यह बिनाभाव धोरधुरन्धर श्रीरामचंद्र के मन पर ऐसी प्रभुता जमाया कि बनवास के चौदह वर्ष भी वैसा ही कटे जैसा राजभवन में कटते। ऐसा ही नल दमयन्ती द्रौपदी और पाण्डवों की विपत् का समय सुमिर रोंघटे खड़े होते हैं किन्तु यही बिना भाव उन उन धीरधुरीण महापुरुषों के लिये

भी विपत्ति के समय का सहारा हुआ । किम्बहुना, सूक्ष्मदृष्टि से देखिये तो बिनाभाव का संकोच यहाँ तक पाया जायगा कि आदमी आधसेर तीन-पाव रूखा-सूखा अन्न कन्दमूल फल या इस प्रकार के दूसरे पदार्थ खाय और स्वच्छ निर्मल जल पान कर पूर्ण आयुष्य जी सकता है। राबिनसन क्रूसो का किस्सा हमारे इस लेख का उपयुक्त उदाहरण है।

फरवरी १८६३

# (२७) कतिकी का नहान

कतिकी पूनो पास आरही है—दूसरे ही दिन होने वाली है। रेल से चार स्टेशन जिसका किराया दस आना आते जाते सवा रुपया है उससे एक स्टेशन इधर ही तक का किराया केवल नव आना है आने जाने के पूरे किराये में दो आने की किफ़ाइत है। पाँच पाँच सात सात के कई झुंड औरत और मर्द के देखे गये जो करीब बीस मिनिट तक बराबर झगड़ते रहे और आपस के "डिबेट" मशविरे में ऐसे मशगूल थे कि पार्लियामेंट के मेम्बरों को भी अपने मुकाबिले हेच कर रहे थे। "भाई हमे तो ये दो आने अधिक देते बहुत गढ़ाते हैं दो आने हमारे घर भर का एक दिन का भोजन है। क्या करैं हमे अब गंगा में कतिकी का नहान कल नहीं मिल सकता है। इससे लाचार लोटा थाली गिरों रख रेल का किराया रुपया अठारह आने किसी तरह लाये हैं नहीं तो हम सब लोग पैदल पहुँच जाते। पहले से कुछ इरादा न था कि कतकी नहाने जाँयगे कतवारू को जाते देख हमारे घर के लोगों को भी नहाने का हौसिला हो आया"। दूसरा बोला—"यही तो बात है खटला साथ रहने से तो लाचार हो जाना पड़ा अकेले होते तो क्या बात रहीं किड़िक जाते। हमारे लिये तो इतनी दूर आधे दिन की रास्ता है।" तीसरा जो सुफ़ेद पोश था जिसकी बोलचाल से मालूम होता था कि यह सौ पचास रुपये की मातबरी रखता है बोला—अजी दो आनें की क्या हक़ीक़त है जो देर से इसके पीछे सिर मार रहे हो एक आना कम देने से दो ढाई कोस पैदल चलना पड़ेगा भाई हम तो दस ही आने का टिकट लेंगे। एक दूसरे जो लाठी में पनही टाँगे लाठी

कन्धे पर धरे थे बोले—हम भी तुम्हारे से भागवान् होते तो क्या मुजायका था दो आने क्या दो रुपये कुछ न थे। बाहरी लोगों की स्थूल दृष्टि में यही खयाल जमैगा कि एक साधारण से पर्व में जगह-जगह लाख-लाख पचास हज़ार आदमियों की भीड़ जुड़ जाती है तो मुल्क बड़ी खुश-खुर्रम हालत में है जहाँ इतने बेफिकिरे पड़े हैं जिनको रोज़ सैर-सपाटा की सूझती है। किन्तु इनका भीतरी हाल सोच जी भर आता है। वास्तव में जो वे अच्छी तरह खाने-पीने से दुरुस्त रहते तो रेल के किराये में दो आने की कमी के लिये इतना न झगड़ते। फाके करेंगे पर पर्व में गङ्गा-स्नान को अवश्य ही जाँयगे।

हमारे नव शिक्षित समझते हैं देश तरक्की कर रहा है इसी धुन में हम लोगों को इस गिरी दशा से उठाने को कानग्रेस, कानफेरेन्स आदि न जाने कौन-कौन उपाय से सोचते हैं किन्तु ये सब उपाय हमको ऊपर को उठाने की निरा खयाली पुलाव है। कितनों का मत है कि इज्युकेशन तालीम का सर्व साधारण में प्रचार पाना देश को ऊपर उठा देगा। हमारी समझ में इस पचास साठ वर्ष में जो विद्या का प्रचार अब तक हुआ है वह रुपये में एक पाई भी नहीं है। बङ्गाल और मदरास जहाँ बहुत पहले से अंगरेज़ी फैली और अंगरेज़ी भाषा वहाँ की मातृभाषा की जगह होती जाती है। वहाँ अभी सैकड़े में सात या आठ आदमी आबादी के हिसाब से पढ़े-लिखे पाये जाते हैं तो हिन्दुस्तान के इस प्रान्त का क्या कहना जो हमेशा हर एक बातों में औरों के पीछे रहने का आदी हो रहा है आगे बढ़कर हाथ मारना जिसे आता ही नहीं न आगे बढ़ जाने की हिम्मत इसे है। तालीम अभी मदरास, कलकत्ता, बम्बई, इलाहाबाद, लाहोर लखनऊ, ऐसे दो चार बड़े-बड़े शहरों में कुछ फैली है सो इतनी नहीं कि समाज में उसका कुछ असर हुआ हो। हमारी भ्रष्ट

और पतित समाज में पढ़े-लिखे अभी केवल दाल में नमक हैं। जिन्हें तालीम हुई है उनकी आँख खुली तो अब हक्का-बक्का हो गये हैं उन्हें कुछ समझ ही नहीं पड़ता कि हम कैसे रहें, कैसे चलें, तालीम पाये हुये अपने इस नये जीवन को कैसे संसार में लै चलैं। कितनों को यह तालीम बन्दर के हाथ में मणि के समान हो गई है। उनके बर्ताव से यही साबित होता है कि तालीम बुरी चीज़ है। तो जो कुछ अब तक हुआ वह सब बाहरी बाहर समाज को आभ्यन्तरिक दशा ज्यों की त्यों वैसी ही बनी है। दिहात और ग्राम में तो कहीं उस की छींट तक नहीं गई जिसका नमूना हमारे इस कतिकी पूनो नहाने वालों के दास्तान से ज़ाहिर है।

इस बात पर भी हमारी दृष्टि गई कि उन नहाने वालों के गरोह में जो स्त्रियाँ थीं वे गाजर मूली की तरह मर्दों के साथ घसिटती चली जा रही थीं। उस देश की भलाई की कब कुछ आशा की जा सकती है जहाँ की स्त्रियाँ ऐसी बेकदर हीन दशा से रक्खी जाती हैं। ये भी उन्हीं बिलाइत की नाज़ुक रोशन ज़मीर परिष्कृत मस्तिष्क वाली, लेडियों की बहने हैं जिन लेडियों को सुशिक्षित जाति और सुसभ्य देशों में धूम है। यदि इनकी हीन दशा से इनको निकाल मनुष्य की कोटि में ये रक्खी जाँय तो जैसा हम पहले लिख चुके हैं कि क्या एनीबिसेंट और जार्ज इलीयट सी कितनी इनमें न निकले। पर यहाँ तो ये गाजर मूली की सी बेकदर हैं और हमारे समान इनको वही सब बात दी गई है इसका खयाल कभी किसी को होता ही नहीं तो क्या किया जाय। सतीत्व और सच्चरित में अवश्य बिलाइत की परिष्कृत मस्तिष्क वाली लेडियों को कहो लात मारें पर बुद्धि वैभव में यहाँ लौं कम हैं कि उनके हर एक काम खयाल और रुचि में गँवारपन बरस रहा है। अस्तु, स्त्रियों को कौन झींखे

जब पुरुषों का यह हाल है कि वे अपनी वही पुरानी लीक पीटते चले जा रहे हैं ज़माने में क्या क्या हेर-फेर हुये इसका खयाल कभी उनको ख्वाब में भी नहीं होता। अफ़सोस हमारे तालीम याफ़्ता भी उलटा ही सोचते और चलते हैं। एक तो हमारे योंही दुर्दिन हैं दूसरे हमारे साथ सहानुभूति दरसाने वालों के (Views) खयाल भी कुछ उलटे ही हैं। जो दुरुस्ती के सामान तक हमें ले जाया चाहते हैं। हमारी इस समय वह दशा है कि दवाखाने को रोगी के पास जाना चाहिये न कि रोगी चल कर दवाखाने के पास खुद आवे। हज़ार कोई कितना ही यत्न करे हम उस प्रकार के रोगी नहीं हैं कि आप से चलकर दवाखाने के पास जाँय।

नवम्बर १८६७

## (२८) एक इंगलिसाइज़्ड नये मित्र की मुलाकात

हमको यद्यपि अहल विलाइती साहबों से मिलने और उनके बंगलों पर सलाम के लिये जाने का बहुत कम इत्तफाक हुआ था, न हमको इसमें कुछ सुख मिलता है इसलिये साहब लोगों की यह सेवा-टहल हमसे आज तक न बन पड़ी। लक्का कबूतर की भाँति बंगलोंके इर्द-गिर्द कावा मारने या बेयरा खानसामों से दोस्ती पैदा करने का आनन्द ही हमें कभी न प्राप्त हुआ। पर थोड़े दिन हुये हमारे मित्रों में एक साहब जो हालही में बिलाइत से लौट वहाँ से साहब बन कर आये हैं अपने परिश्रम और योग्यता से जल्द ऊँचे पद पर पहुँच शहर के औवल दरजे के रईसों में दाखिल हुये। मित्र जी हमारे जरा तेज तबियत और अंगरेजी मिजाज के आदमी हैं इसलिये उन्होंने शहर की गन्दी बस्ती में रहना नापसन्द कर शहर से कोसों दूर गंगा के किनारे एक बंगला किराये पर लिया है।

आपको कदाचित यह न मालूम होगा कि अंगरेजी बंगलों के भी जुदे-जुदे नाम होते हैं अगर बड़ी कोठियाँ हुईं तो क्यासिल कहलाते हैं जो खपड़ैल के छाये हुये भये तो बंगलों या लाज की पदवी पाते हैं और फूस के छाये निरे झोपड़े हुये तो काटेज कह लाते हैं। अस्तु, हमारे मित्र ने जो बंगला किराये पर लिया उसका नाम ग्रीन काटेज अर्थात् सब्ज झोपड़ी है। सब्ज इसका नाम दो कारण से बिदित होता है एक तो यह कि घास-फूस की छाई है पर यह कुछ ठीक नहीं मालूम होता सब्ज उसका नाम इसलिये पड़ा कि यह रहनेवालों को सब्ज बाग़ दिखलाती है क्योंकि केराया उसका सोलह रुपया साल है। यहाँ पर यह भी समझे रहिये कि अंगरेजी मकानों के केराये साल भर के लिये तय होते हैं। और

यह मकान कितना बड़ा होगा सो झोपड़ी के नाम ही से स्पष्ट है। हमारे मित्र जो हम पर बहुत दया दृष्टि रखते हैं बड़े सज्जन पुरुष हैं सच तो यों है कि यद्यपि अंगरेजी वजा की बहुत सी बातें उनमें हैं पर ईश्वर की कृपा से मिजाज में अंगरेजी रूखापन अभी तक नहीं घुसने पाया आगे को भगवान जाने क्या हो। खैर, एक दिन उन्होंने हमारी जियाफ़त को बड़े चाव से हमें बुला भेजा उनका एक पत्र हमारे पास आया मजमून जिसका यह था—आज साँझ को आप हमारे ही यहाँ भोजन करें तो बड़ा अनुग्रह हो। कदाचित् दिल्लगी के ढंग पर यह भी उसमें लिख दिया था कि कृपा कर ठीक समय पर आने का यत्न कीजियेगा। खैर, कारण पीछे लिखेंगे पर पहुँचने में तो हमको देर हो ही गई थी। हमे पीछे से मालूम हुआ कि इसमें हमारे मित्र की बड़ी हानि हुई। हमारे यहाँ ठाकुर जी का भोग लगता है तो घंटा बजता है उन लोगों के यहाँ भोजन के समय बुलाने को घंटी बजती है कदाचित् इसका यही मतलब है कि अगर आप समय से पहुँच गये तो कुरसी खाली होगी यदि आपको देर हो गई तो सचमुच आपके लिये घंटा ही है और जिन पैरों गये थे उन्हीं पैरों लौटना पड़ेगा। यह सब तब होता है जब अधिक लोग की भीड़भाड़ और जमघट होता है किन्तु हमारा निमन्त्रण तो मित्र जी ने अकेले ही का किया था इससे हमको ऊपर लिखी हुई खातिरदारी की पेचीदगी न भुगतना पड़ा पर हाँ शुरू से सब हाल आपको सुनावें।

यह तो आप जान ही गये कि यह मकान जहाँ मित्र जी रहते थे शहर से इतनी दूर है कि रोज आदमियों को कौन कहै शायद रात को चोर को भी उधर कभी मुँह करने का हौसिला न होता होगा। इसलिये यह एक फाइदा अंगरेजी बंगला किराये लेने का तो अवश्य मानना पड़ता है जब यह हाल है तो बत-

लाइये इतनी दूर पैदल चलने का ख्याल कौन करेगा। गाड़ी घोड़ा सात पुरुखों में भी हमारे यहाँ कभी किसी जन्म न था अब रही केराये की गाड़ी सो दरियाफ्त किया तो पहले उसने यह पूछा आप वहाँ कितनी देर ठहरेंगे। हमने समझा मित्र के यहाँ जाते हैं न जाने बातचीत गपशप में कितनी देर हो इस लिये तीन या चार घण्टे का वादा उससे किया पर चार घण्टे का उसने चार रुपये कहा। चार रुपये का नाम सुनते ही जाड़ा-सा लग आया कान खड़े हो गये चट्ट किराये का एक्का कर रवाना हुये और किसी तरह वहाँ पहुँचे। एक्के किस तेज़ी और आसानी से चलते हैं यह भी आप खूब समझते होंगे। अब अँधेरा भी हो गया था वहाँ के निराले सूनसान दृश्य का हाल न पूछिये ऐसी सूनी अकेली जगह में रहने को लोग जो समझते हों चाहे जो कुछ तारीफ़ उसकी करें पर हमको तो ऐसा मालूम हुआ कि यदि हमको वहाँ एक अठवारा रहना पड़े तो खासा पागलपन नहीं तो खफ़ाकान हो जाने में कुछ शक ही न रहे और बरैलीही के सदर मकान की सैर करना पड़े। अब अँधियारे में भूल यह हुई कि जिस दरवाज़े से हमको जाना था उसको छोड़ बंगले के न जाने किस ओर जा निकले। अगर गाड़ी पर आये होते तो ठीक दरवाजे पर जा लगते पर हमने बेवकूफी यह किया कि बगला थोड़ी दूर रह गया तो एक्के पर से कूद कंपौंड में पहुँच अपनी कुदरती बाइसिकिल अर्थात् इन दोनों पैरों की जोड़ी को हाँक दिया और न जाने कहाँ जा निकले इसी से यह गलती हुई। खयाल कीजिये अगर हिन्दुस्तानी किते का मकान हो तो पता भी लगे कि यह सदर दरवाजा है। इन अंगरेज़ी बगलों में जिधर देखिये दरवाजे ही दरवाज़े मकान क्या शहद की मक्खियों का छत्ता है। खैर गिरते-पड़ते गए दरवाजे में घुसी तो पड़े। ऐ है! यह तो बावरचीखाना था जहाँ काले-काले

शेख लट्टूदार पगड़ी बाँधे किसी खास तरह की गोश्त पकाने के मसाले तय कररहे थे। अधचुरी माँस में प्याज और लहसुन की बघार की बू ने दिमाग़ को परागंदा कर डाला। उबाले हुये अंडों का पीला-पीला अर्क चीनी के प्याले में रक्खा देख मेरा ऐसा जी मिचलाना कि बड़े मुशकिलों में अपने को सम्हाल सका। खुली हुई आलमारी में नीमबिरियाँ मिरचा और नोन भुहराई किसी जानवर की राँद रक्खी हुई थी जिसे देख जी ऐसा भड़का कि घण्टों तक काबू में न रहा। मन में सोचने लगा पुराने कवियों के समय अंगरेजी देश में न व्यापी थी नहीं तो भवभूति आदि कवि बीभत्सरस के उदाहरण में जहाँ श्मशान और व्रण आदि रक्खे हैं वहाँ अंगरेजी बावरचीखाना भी अवश्य रखते। खैर, उन्हीं लट्टूदार वालों से पूछपाछ करने से मालूम हुआ कि कोठी दूसरी ओर है। बाहर निकले तो जाना कि जिस फाटक से आना चाहिये था उससे न आये इसलिये इतना भ्रम में पड़े और बेजगह जा लगे। खैर, उधरही को मुड़े एक आदमी उधर से आता था उससे पूछा कि किधर जाँय? उसने कहा मैं तो दर्जी हूँ साँझ हुई काम से फुरसत पाय घर को जाता हूँ यह कह चल दिया। हमने समझा साहब लोगों की कोठी में बँधा हुआ कारखाना रहता है जो काम जिसके सिपुर्द हो वही करे दूसरा कोई उस काम की ओर आँख उठाके देखे तो दोनों आँखें निकाल ली जाँय इसलिये मियाँ दर्जी का शायद यह मनशा नहीं था कि बतला दें कि दरवाजा किधर है। आगे बढ़े तो एक दूसरे आदमी बुजुर्ग से मुकत्त। डाढ़ी लिये अंगा पायजामा पहने निकले। उससे चाहा कि कुछ पूछें पर वह ऐसी तेजी के साथ उसी बावरचीखाने में घुस गया कि हम हक्का-बक्का से खड़ेही रह गये कुछ कहते न बन पड़ा। अब हम इस खोज में हुये कि पहले उस आदमी को ढूढ़ें जिससे कुछ पूछ सकें कि

सरकार साहब किधर हैं। अस्तु, हमने मन में यही सोचा आओ बङ्गले के चारो ओर प्रदक्षिणा कर आवें आप ही पता लग जायगा। हनूमान् जी ने कदाचित् इतने अचरज के साथ लंका की परिक्रमा न किया होगा जैसा हमने किया और बीच-बीच यह मंत्र भी पढ़ते जाते थे।

यानि कानि च पुण्यानि अश्वमेधार्जितानि च।
तानि तानि विनश्यन्ति प्रदक्षिण पदे पदे॥

घूमते-घूमते दूर से देखा कि पंखा चल रहा है एक लैंप टेबुल पर रक्खा हुआ झिलमिला रहा है और हमारे दोस्त साहब जाकेट पतलून कसे कुर्सी पर बैठे हैं। उस समय हमारे मन में आया कि जहाँ कोठी और अंगरेज़ी बज़ा रखने में और बहुत से मजे हैं वहाँ एक यह भी है कि गर्मी से गर्मी के मौसिम में भी डबलज़ीन का कोट और पतलून लादे रहना पड़ता है और यह भी मन में तर्कना उठी कि जो लोग बङ्गलों में रहते हैं और साहब बहादुर बनने का दम भरते हैं उनमें ठंडे मुल्क की तासीर भी आ जाती होगी। पर ये सब बातें इतनी वैज्ञानिक हैं कि बिना साएन्स पढ़े हमारी तथा आप को क्षुद्र-बुद्धि में आने योग्य नहीं हैं। इसलिये इस पर अधिक विचार और ऊहापोह करना व्यर्थ है। ज्योंही हमने भीतर जाने का मन किया त्योंही दो बड़े-बड़े कुत्तों ने आय दामन पकड़ा! कदाचित् इन कुत्तों का यह मतलब था कि वे दरियाफ़्त किया चाहते थे कि तुम्हारे पास कार्ड है या नहीं क्योंकि सामने से एक लट्टूदार वाले आय प्रगट हुये तो उन्होंने भी यही पूछा जिसकी पोशाक देख मैं अचरज में आया और सोचने लगा अङ्गरेज़ी नौकर भी हम से अधिक ठाठ से रहते हैं। अब कार्ड की कुछ टिप्पणी करें तो आपके समझ में आवे कि यह क्या वस्तु है। यह वह चीज है कि एक आदमी जब दूसरे की मुलाकात को जाता है तब उसके

पास उसे भेजता है जिसमें भेजनेवाले का नाम छपा रहता है। पर जैसा कि हमको ऐसी बड़ी इज्जत और प्रतिष्ठा बढ़ाने वाले मुकाम किसी पार्टी या बाल में जाने का कभी इत्तिफाक नहीं हुआ था इसलिये अङ्गरेजी तर्ज की मुलाकात का यह औजार हमारे पास न था। कभी नाम तक इसका न सुना था केवल इतना जानते थे कि कार्ड के माने हैं खेलने का ताश या चिट्ठी लिखने का पोस्टकार्ड भी चल निकला है। अब अलबत्ता इरादा है कि कल ही पाँच सौ कार्ड छपवा डालें और जिसके यहाँ जाया करैं उसके हाथ में पहले कार्ड थंबा तब बातचीत शुरू करें।

महाजनो येन गतः स पन्था

बड़े लोग जिस रास्ते से चलैं उसी रास्ते पर खुद भी चलै। खैर, हमने उस खानसामा से कहा (शायद खानसामा इन लोगों का नाम इसलिये पड़ा है कि खाने का सामान करते हैं) कार्ड तो हमारे पास नहीं है। तब उसने कहा फिर कैसे आपके आने की इत्तिला की जाय। हम हमेशा से तेज तबियत के लिये मशहूर हैं जल्द मैंने अपनी छड़ी दे दी और कहा इसको ले जाओ और अपने सरकार से कहो जिनको आपने यह छड़ी दी थी वही आये हैं और उनको आपने आज शाम को बुलाया भी है। पहले तो वह हिचकिचाया बाद कुछ सोचसाच ले गया। हाल सुनते ही हमारे मित्र जी खुद चले आये और खानसामा को हमें रोकने के लिये बहुतसा घोटा हाथ पकड़ हमें भीतर ले गये। अब मित्र से जो हमसे बातचीत हुई और जिस ढङ्ग पर वे हमसे पेश आये उसे हम फिर कभी को आपको सुनावेंगे।

मार्च १८८९

# (२६) हाकिम और उनकी हिकमत

जैसे प्रकृति के अधिष्ठान बिना सांख्यदर्शन वालों का पुरुष जड़ निश्चेष्ट और बेकाम है वैसे ही सर्वशक्तिमान् हे हाकिम ! तुम अपनी हिकमत अमली के अधिष्ठान के बिना सामर्थ्य शून्य हो। तुम हमारी महाराणी के प्रतिनिधि स्वरूप हो ! २८ करोड़ मनुष्यों का बनना बिगड़ना आप ही के हाथ में रख दिया गया है। तुम विचारपति हो ! कचहरियों में ऊँचे आसन पर सुशोभित हो हंस के समान इन्साफ करने में दूध का दूध पानी का पानी कर देने में समर्थ होकर भी जो अपने प्रकृति के गुण हिकमत के परवश हो अपनी जाति वालों का तथा शासनप्रणाली में अपने देश का विशेष पक्षपात करते हो सो केवल कवि की इस उक्ति को सार्थकता के लिये।

"भवन्ति साम्येऽपि निविष्टचेतसां वपुर्विशेषेष्वति गौरवाः क्रियाः"

हे महाप्रभो ! आप हमारे देश के शतरञ्ज वाले राजाओं में नहीं हो किन्तु सर्वों को आक्रमण किये मेरु और हिमालय से भी अधिक उच्चतर हो।

"स्थितः सर्वोन्नतेनोर्वीं क्रान्त्वा मेरुरिवात्मना"

हे शुभयो आप राजराजेश्वरी के महापार्षद हो ! खां बहादुर रायबहादुर आदि उपाधि आपकी सेवा परिचर्या का सद्यः फल और आप की हिकमत अमली का परिणाम है। हे सकल सामन्त चक्रवर्त्तिन् ! अनेक दोष दूषित भी आपकी कारगुजारी को क्या ताक़त कोई दूष सके। आपके प्रबन्ध को बुरा कहना गवर्न-

मेण्ट का विरोधी हो जाना है। हे सर्वव्यापिन् ! आपका महा-विराट वैभव पायोनियर का हजार मुखसे हमे चाहे सो कहडालें हमारे दोषों को सहस्र नेत्र से निरखा करें कोई हर्ज की बातनहीं क्योंकि वे सभ्य समाज के अग्रणी और सभ्यताप्रचारक परमाचार्य हैं। किन्तु हम लोगों के मुख से यदि कुछ निकल जाय चाहे वह वास्तव में सच भी हो "सेडिशन" और प्रजा के मन में वि; उभाड़ने वाला है। हे महाभाग तुम प्रत्यक्ष देवता हो देवगण जैसा देवाङ्गणाओं को साथ लिये स्वच्छन्द क्रीड़ाविहार किया करते हैं वैसा ही तुम-भी प्रजा का धन और प्राण अपनी मूठी में कर विमान सदृश स्वच्छ फिटिन पर लेडियों को अपने पास बैठाये विमल गगनपथ समान ठंडी सड़कों में स्वच्छ समीर का सेवन करते हुये विचरते हो। देवगण अजर होने के कारण बाल्य यौवन और प्रौढ़ इन्हीं तीन पन में सदा रहते हैं अर्थात् बुढ़ापा उन पर कभी व्यापता ही नहीं वैसा ही तुम भी कभी बूढ़े नहीं होते क्योंकि ५५ साल के ऊपर सर्कारी नौकरी से बरतरफ कर देने वाला कानून बहुधा तुम्हारे लिये नहीं देखते। यद्यपि आप हम लोगों के समान जो मनुष्य कोटि में हैं अल्पज्ञ मूढ़ मन्दमति होकर सरकारी नौकरी का काम नहीं आरम्भ कर देते किन्तु लियाकत और सब तरह की योग्यता के पुतले बनकर विलाइतसे आते होतो भी बीच-बीच अपने अधिकृत कामों में ऐसी अनभिज्ञता और बाल्यभाव जो प्रगट कर उठते हो कि पाँच वर्ष का बालक भी ऐसा न करेगा सो यह सब आपकी क्रीड़ा और लीलाविलास है। जिस लीलाविलास की पुण्य कथा और पवित्र चरित्र का सब हाल हम लोग समाचारपत्रों में पढ़ अपने भाग्य सराहते हैं और अपने को धन्य और कृतकृत्य मानते हैं। जिसके द्वारा पुण्य श्लोक सङ्कीर्त्तन समान हमारे जन्म-जन्म के अघ ओघ सब बलाय जाते हैं। हे पेनटलूनाम्बर !

यौवन और पेन्शनर बन जाने के समय को प्रौढ़ दशा समझ तुम्हें त्रिदश अर्थात् तीन दशा वाला यह नाम देना बहुत ठीक है।

"अमरानिर्जरा देवा त्रिदशा विबुधास्सुराः"

हे प्राड्विवाक! साहब नामधारी साधारण हाकिमों में तुम त्रिदशेश अर्थात् देवराज इन्द्र हो। कचहरी तुम्हारा स्वर्गराज्य है। चेयर तुम्हारा स्वर्गसिंहासन है और पेशकार तुम्हारी शची-देवी इन्द्राणी हैं। जैसे एक इन्द्र के बदल जाने से शचीदेवी और स्वर्गसिंहासन की बदली नहीं होती वैसे ही तुम्हारे साथ तुम्हारे परमभक्त पेशकार का परिवर्तन नहीं होता। तुम सोलहो कला पूर्ण साक्षात् चन्द्रमा हो, अमलावर्ग जिनके मध्य में तुम विराजमान हो वे सब तुम्हारी महिषी स्वरूप तारागण हैं। चन्द्रमा जैसा असंख्य तारापति होने पर भी रोहिणी के विशेष वशीभूत रहता है वैसा ही तुम भी अनेक अमलों के रहते भी शरिस्तेदार के विशेष वशीभूत रहते हो और शरिस्तेदार जो कहीं मुसल्मान हुये तो मानो पूरा जोड़ बैठ गया। चन्द्रमा को कभी-कभी मेघ आकर ढाँप लेते हैं तुम्हारे लिये वह मेघ कोई तेज़ वकील वा बैरिस्टर है।

हे महामहिम! हाथी के दिखाने वाले दाँत की भाँति फ्रीट्रेड आपकी गूढ़ पालिसी के मर्म को कौन थहा सकता है। आपके हुकुम एहकाम आईन कानून जिनमें आप की हिकमत भरी हुई है इङ्गलैण्ड ऐसे सभ्य देश के लिये सब तरह पर उपयुक्त है इण्डिया के सीधे सादे सरल मनुष्यों के लिये असह होती जाती है। तस्मात् हे सौम्यदर्शन! यदि आप हम लोगों के साथ माता के समान वत्सलता का भाव धारण कर हम लोगों का शासन करते तो हम सब भाँत सुखी रहते। हे सर्वोत्कृष्ट! ब्रिटिसशासन संसार के जितने

राज्य हैं सबों में उदार और संसार में जितने जाति के लोग हैं उनमें तुम्हारी कौम सबों में उदार प्रसिद्ध है वह उदारभाव हम लोगों के प्रति जो आप जी खोल कर नहीं प्रगट करते यह केवल आपकी हिकमत का दोष है।

हे अणोरणीयान् महतो महीयान्! आप अपनी शोषकता शक्ति कुछ कम कर मृदुता धारण करते तो हम सर्वोच्छेदन से बचे रहते और फल सम्पत्ति से बदले में आप ही को और भी बढ़ाते।

"अभिवर्षति योनुपालयन्! विधिवीजानि विवेकवारिणा।
स सदाफलशालिनीं क्रिया शरदं लोक इवाधितिष्ठति"

जो मनुष्य प्रभुशक्ति सम्पन्न हो विवेक के जलसे सींच अपने प्रबन्धरूप बीज को बढ़ाता रहता है वह नीतिनिधान शरत्काल के समान समय से उसका पूरा फल पाने का अधिकारी होता है। नितान्त अबोध हम आपकी निसर्ग दुर्बोध हिकमत अमली को क्या समझ सकते यह आप ही की कृपा है जो आपके द्वारा वितरित शिक्षा से नेत्रोन्मिलन पाकर कुछ-कुछ; अब आपकी पालिसी के ढंग को समझने लगे हैं।

"निसर्गदुर्बोधमबोधविक्लवाः क्व भूपतीनां चरितं क्व जन्तवः।
यवानुभावोयमवेदियन्मया निगूढतत्त्वं नयवर्त्म भूभृताम्,'॥

हे सर्वशक्तिमान्! हम लोग सर्वतोभावेन आपही के आश्रित हैं अनन्यशरण हैं हमें बढ़ाओगे तो इसमें आप ही की बड़ाई है नहीं जैसा आपकी इच्छा और रुचि। हम लोगों का कपोतव्रत है।

"मुखसों आह न भाखि है निजसुख करो हलाल"

हे अमेय अगम्य ! आपके नामरूप गुण कर्म को आदि से अन्त तक कहने को कौन समर्थ है आपकी स्तुति के समान जो यहाँ कहा गया उसमें जो कुछ अनर्गल हो गया हो तत् क्षम्यतां क्षम्यतां क्षम्यताम् ।

मई १८६२

## (३०) पञ्च महाराज और मिडिल क्लास परीक्षा

पञ्च महाराज जिन्हें प्रपञ्चात्मक इस जगत के परपञ्च से ही केवल प्रयोजन रहता है एक दिन घूमते-घूमते किसी स्कूल की ओर झुक पड़े। जाकर देखा तो यह मिडिल क्लास की परीक्षा वृत्तिकर्षित इस दरिद्र देश में बबूल वृक्ष के समान कंटकित और कठोर हो रही है। जैसे बबूल का डालियाँ और काँटे खेतों और फलन्त वृक्षों के रूंधने के काम में आते हैं वैसे ही यह मिडिल क्लास परीक्षा रुपिणी बबूलिका अच्छे-अच्छे गुण गौरव के फलों से लदे हुये वृक्षों की वृद्धि और विद्याक्षेत्रों के अवरोध की उपयोगिनी बन रही है। पञ्च महाराज के मन में आया कि बबूल वृक्ष तो केवल काष्ठ मात्र से कठोर और कंटक मात्र से दुखदायी समझा जाता है पर यह नया बबूल वृक्ष कई तरह से कठोर और भयङ्कर है।

सच है लोभी के गाँव में लबार उपास नहीं करता इस लोकोक्ति के अनुसार मूर्खताङ्कुर धारिणी विद्योदय विदारिणी इस बबूलिका का प्रचार कुटिल नीति की दुन्दुभी के द्वारा होते ही देखा तो छोटे बड़े सब के सब झुण्ड के झुण्ड उठ धाये जो पुरुषोत्तम और बदरिकाश्रम के यात्री थे वे भी तीर्थयात्रा की राह छोड़ डफालियों का झकझकी बाजा सुन गाजी मियाँ के रौजे की ओर झुक पड़े। पर वहाँ क्या रखा था मुजावरों की बन पड़ी लम्बरवार या दर्जे बन्दी के अनुसार लगे फातिहा पढ़ने और यात्री बेचारे से वर्षौड़ी नेगकी भाँत फीस चुकाय कान पकड़-पकड़ उन्हें बाहर निकालने और कहा अब रफूचक्कर हो दूसरे साल फिर

इन्हीं दिनों मियाँ के दरबार में हाज़िर होना। घुणाक्षर न्याय से अटकलपच्चू किसी का तीर लग गया तो मुजावरों को दृष्टान्त मिल गया कि देखो मियाँ के दरबार में आने और मुजावरों की शिफारिश से फलाँ फलाँ आदमी अपनी मुराद को पहुँच गये। बस इसी प्रकार जो लोग दसवें क्लास से चल कर दूसरे क्लास तक क्रम से इस आशा पर जाते थे कि इन्ट्रन्स में हमारी यात्रा सफल हो जायगी सो भी उतावले बन दसवें से लेकर चौथे तक कच्चे पक्के भूखे प्यासे गिरते-पड़ते मलीदा रेवड़ी लेकर ऐसी दौड़ से दौड़े कि धमाधम हज़रत मिडिल के कब्रिस्तान में पहुँच ही तो गये। क्या कहना है तीन-तीन रुपये का चमचमाता बारनिशदार बूट पहन और दो दो रुपये की पेटारीदार या किश्तीदार टोपी सिर पर रखे ऐसे उत्साह से पहुँचे कि मानों पोते का व्याह है अथवा विश्व विजय का अभिषेक समारोह है।

खैर, जो कुछ बन पड़ता लिखा लिखाया बूझा बुझाया जब पहेलियों की लाल बुझक्कड़ी और सवाल का जवाब बड़े पोर और उस्तादों के पजे में आया तब एक ठीक तो ग्यारह फ़िस्स दो ठीक तो बाईस फ़िस्स तीन ठीक तो तैंतीस फ़िस्स बस इसी तरह फ़िस्स का ढेर जमा होने लगा। यार लोग भी ताड़े बैठे हैं बच्चा अब तो तुम पञ्च पीरों के पैरों के नीचे आ ही गये हो जहाँ तक ढूँढ़े खोजे मलीदा रेवड़ी का दाम मिल सकेगा लाय झंडे के नीचे ज़रूर ही रखोगे काट फाँस की कुटिलाई में न चूके यहाँ हलुवा रोटी से काम मुर्दा चाहे दोजख में गिरै या बिहिश्त में पहुँचे। नीचे के सात दरजों में जल्द पहुँचने की लालच से बिगड़ भी गये तो कुछ परवाह नहीं चढ़ा दिये गयेपर यहाँ प्रपंच कारिणी धन और उत्साह संहारिणी मिडिल परीक्षा के खोह में जो गिरा वह निनानबे के फेर में पड़ गया। काहे को मुजावरों को उनकी चमत्कारी मुँह माँगी मुराद पाने लायक कभी जँच

सकती है। कायर हुये तो भाग निकले लज्जावान हुये शरमा शरमी ऊपर के दर्जों की भी मोह छोड़ उसी कुंड में बार-बार गोता खाया किये और जब बार-बार की बुड़की में भी निरा घोंघा हाथ आया तो बस निरे घोंघा बसन्त बन बैठे

"दोनों दीन से गये पाँड़े न रहे हलुआ रहे माँड़े"

यह सब देख चल पञ्च महाराज के जी में आया कि विद्या रसिक समझदार लोग क्यों इसमें पड़े हैं उन्हें चाहिये इन्ट्रन्स की आशा से पढ़ते जाँय और अपनी लियाकत बढ़ाने में शिथिल न हों धोखे की टट्टी इस मिडिल की आशा को बिल्कुल छोड़ दें। अगर इन्ट्रन्स में पास हो जाँयगे तो सोना और सुगन्धि है नहीं तो विद्या की प्राप्ति और लियाकत का बढ़ाना तो कहीं गया ही नहीं हर साल पाँच रुपये या आठ रुपये सालाना। (सर्वं स्वाहा) से बचे रहना क्या कोई छोटी बात है। कहाँ तक इस दुरन्तराल खोह में घर की रही सही पूँजी हमारे समझदार लोग फेंकते रहेंगे। निस्सन्देह जो यात्री देव दर्शन को बाट छोड़ इस रौज़े की तरफ झुकते हैं वे केवल भेड़ियाधसान का व्याकरण सीखे हैं। गाजीमियाँ या दूसरे कोई आमिल कामिल का नाम ही नाम है जहाँ देखो वहाँ मुजावरों की मौज है यह सब सोच विचार पञ्च महाराज वहाँ से चल दिये।

जुलाई १८९१

# (३१) हमारी गुदड़ी के लाल

यूरोप के नौजवानों से जब हम अपने यहाँ के नवयुवकों को मिलाते हैं तो उनमें और इनमें बड़ा अन्तर देखने में आता है। यूरोप में कोइ ऐसी बात नहीं है जो आगे बढ़ने से इन्हें रोक सके बल्कि हर एक बात सामाजिक मजहबी तथा घरेलू 'डोमेस्टिक' सब इस ढब से रक्खो गई हैं कि उनको अपने लिये तरक्को करने में बाधा डालना कैसा बल्कि हर तरह का आराम पहुँचाती है। और इतनी आशाइसें उनके लिये रक्खी गई हैं कि ऐसी हालत में हो जब इन्होंने कुछ किया तो उसकी कोई तारीफ नहीं, न करने की निन्दा अलबत्ता है। मुहल्ले मुहल्ले सस्ते से सस्ता स्कूल तथा मिसनरी हैं पाँच-सात वर्ष के हुये बाप माँ ने बिल्कुल उनकी मोह और ममता छोड़ बोर्डिङ्ग हाउस के सिपुर्द कर दिया। हमारे यहाँ का बारह और चौबोस वर्ष का ब्रह्मचर्य केवल किस्से कहानियों की भाँति भले ही सुना करिये किन्तु कर्तव्यता में वास्तविक ब्रह्मचर्य वहीं देखा जाता है कि जब तक किसो विषय के पूर्ण विद्वान न हो जाँयगे विद्याभ्यास की ओर से विमुख न होंगे और न तब तक गृहस्थाश्रम के कामों में प्रवृत्त होंगे। समाज तथा मजहब के पाबन्दी की कैद यहाँ तक कम है कि मोचो का लड़का भी पादरी हो सकता है और पादरी के कुल में जन्म ले बढ़ई लुहार या मोची तक का काम करने में शरम न मानेगा। पृथ्वी के किसी हिस्से में जहाँ चाहे वहाँ जा सकते हैं न उनके मजहब में किसी तरह का फर्क आवेगा न जातपाँत बिगड़ेगी। बाल्य विवाह की कौन कहे पूरी जवानी पर पहुँचकर भी जबरदस्ती

ब्याह देने में बाप माँ का कुछ अख्तियार नहीं न किसी तरह का कैद।।जिस किसी को गृहस्थी करने को इच्छा हो ब्याह कर बन्धन में पड़े नहीं जन्म भर स्वच्छन्द रहे। हमारे यहाँ एक ही सनकादि तथा भीष्म सरीखे दो एक हुए जिनके आबाल ब्रह्मचर्य का गुण अब तक हम गा रहे हैं और यहाँ तक उनकी इज्जत करते हैं कि नित्य के तर्पण में उन्हें भरती कर रक्खा है। वहाँ ऐसे ऐसे हजारों निकलैंगे जो दारपरिग्रह से विमुख रह ऐसे ऐसे अद्भुत काम अपने देश तथा जाति की भलाई के कर गये और करते जाते हैं कि हमारे देश में होते तो अवश्य देवांश या अवतार माने जाते। अस्तु,

अब दूसरी ओर चलिये, पाँच छः वर्ष तक तो कुछ बात ही नहीं है टोना टन-मन की डर से लड़के घर के बाहर ही नहीं निकलने पाते। प्रायः सम्प्रदाय के अनुसार पाँचवे वर्ष मुण्डन होने के बाद जब झालर न रहे तब लड़का इस लायक समझा गया कि अब बाहर निकलने बैठने में टोना टनमन का भय न रहा। इसके पहले उसे निरा "नारी कवच" होकर रहना पड़ता है। अनपढ़ी माँ और मूर्ख स्त्रियों के बीच रहकर जैसे जैसे बोलचाल और जैसी जैसी आदतें सीखा करता है कि उसकी प्रशंसा ही नहीं करते बनता। उपरान्त स्कूल में भेजना और तालीम की फिकिर बाप माँ को पीछे होती है ब्याह पहले ही कर दिया जाता है दूसरे 'ज्वाइण्ट फेमिली' कुल कुटुम्ब का एक ही घराने में रहकर एकत्र भोजन ऐसी भारी विपत्ति है जिसे हम बाल्य विवाह से किसी अंश में कम न कहैंगे। यह और भी नवजवानों को उभड़ने नहीं देती। इस बेचारे ने बहुत कुछ जोर मार कर भी अपने घराने की इज्जत बाव और बना रक्खा मानों बड़ा काम किया घर का दीपक और सपूत कहलाया। हिन्दुस्तान से विलाइत का 'डिफिनिशन' ही

सपूती का बिल्कुल निराला है। विलाइत में जिसने केवल अपना पेट पाल लिया अथवा अपने कुल या घराने की प्रतिष्ठा बना रक्खा वह एक सामान्य मनुष्य कहलावेगा सपूती के दफ्तर में उसका नाम तभी दर्ज किया जायगा जब इसने अपने देश या जाति की भलाई का कुछ काम किया हो। जिसके लिये शुरू से ही यह तैयार किया जाता है और हर तरह पर इसे इस काम के लिये मौका दिया जाता है। एकान्न भोजन की कुप्रथा न जाने क्यों हमारे यहाँ चल पड़ी है। मनु तथा दूसरे धर्म्मशास्त्र प्रवर्तक ऋषियों ने एक पिता के जितने पुत्र सबों का पृथक पाक इसलिये लिख दिया है कि जिसमें सब पिण्डदान और श्राद्ध के अधिकारी हों नहीं तो केवल जेठा मात्र श्राद्ध आदि पैतृक कर्म का अधिकारी रहता। मैं समझता हूँ बाल्य-विवाह की अशास्त्रोक्त कुप्रथा और पुत्रों का अवश्य व्याह देना बाप का अपना कर्तव्य कर्म समझने का कुसंस्कार पृथक पाक का मूलोच्छेदी कुठार हुआ। हम पिष्टपेषण की भाँति न जाने कै बार लिख चुके कि यह बाल्यविवाह हमारी यावत अवनति का कारण है और जब तक इस बुराई को पाले रहेंगे तब तक हम हजार-हजार तदबीर आगे बढ़ने की करें कभी कृतकार्य न होंगे।

हमारे नवयुवकों की तो इससे बड़ी ही हानि हो रही है सिवा इसके पग पग में धर्मच्युत होना और जात-पाँत का बन्धन उनके नये उत्साह और नये हौसिलों पर पुराने लोगों की तानाज़नी और बिरोध, गवर्नमेण्ट कर्मचारियों का उनकी ओर बुरा ख्याल और उनकी उमदा तालीम रोक देने को हर तरह की कड़ाई आदि राजकीय सामाजिक तथा धर्म सम्बधी पर्वत समान बड़े-बड़े विघ्नों को नांघ-डाक जो वे दिन-दिन तरक्की कर रहे हैं यहाँ तक कि बाजे बाजे यूरोपियन युवकों को कम्पीटीशन में अपने नीचे गिरा देते हैं। जिनके लिये उतनी ही

ही आशाइस और सुभीता आगे बढ़ने का है जितना हमारे अनुपपन्न गरीब नौजवानों को हर तरह की कठिनाई और सख्ती है।

हम पहले ही लिख आये हैं बाप माँ पहले व्याह की फिक्र कर तब लड़कों को स्कूल भेजते हैं। स्कूल या कालेज से निकलते ही पूरा सामान गृहस्थी का मौजूद रहता है। लड़की, लड़के, बाप, माँ, स्त्री के भरण-पोषण की फ़िकिर, उधर एकन्न में सपरिवार मिलकर रहने की बुरी चाल इधर हिन्दुस्तानी पुराने कायदों की पाबन्दी जिसमें ज़रा सा स्वच्छन्दता और आज़ादगी को दखल दिया गया कि बदनामी और समाज तथा भाई बिरादरी में हेठी होवे देर नहीं लगती। सब दुःख एक ओर और यह एक ओर कि पढ़ लिख सुशिक्षित अनेक विद्यापारङ्गत तत्वदर्शी होकर भी उन्हीं अपढ़ दुराग्रही।मूर्ख पुराने खूसट बुड्ढों के राय की पाबन्दी और उनकी हाँ में हाँ मिलाना पड़ता है। नितान्त व्यर्थ बहुत से सामाजिक बन्धन से ऐसे जकड़े हुए हैं कि जिनकी बुनियाद न कहीं हिन्दू धर्म के किसी ग्रन्थों में है, न उनसे किसी तरह के दीनी या दुनियावी फायदे हैं, पर चलन चल पड़ी है इसलिये लाचार हो उन्हें मानना ही पड़ता है। पूरे बारह वर्ष स्कूल और कालेजों में नित्य की हाज़िरी से बड़ी से बड़ी डिगरी हासिल कर बुद्धि सागर बन बैठना एक ओर और घर की पुरखिन पुरानी बुढ़ियाओं की अकिल एक ओर। तुमने अपनी अकिल का जौहर निकाल तालीम हिकमत और सुरशिक्षा का सर्वस्व मथ कर एक नई बात निकाल ईजाद करना चाहा सत्तर बरस की डोकरी को नापसन्द आया नाक भौं सिकोड़ "चलमुये" कह डाँट बैठी तुम भीतर ही भीतर मसोस अपना सा मुँह लिये चुप हो बैठ रहे। तुम क्या तुम्हारे बड़े से बड़े प्रोफेसर साहब को भी कहाँ इतनी हिम्मत कि हमारी

पुरखिन बुढ़ियाओं से वाद विवाद में पार पा सकें। इतने इतने विघ्नों की राशियों को चूरचूर कर और अपने नवाभ्युत्थान में बाधा डालने वाले कठिनाई के दुरुह पहाड़ों को तयकर जो नई उमंग और नया हौसला वाले हमारे नवयुवक आगे को बढ़ते ही जाते हैं यह क्या कोई थोड़ी वात है इसके लिये उनका जितना संभ्रम और जितनी तारीफ की जाय सब बहुत कम है। कौमकी तरक्की और देश का फिर से अभ्युत्थान सब इन्हीं पर निर्भर है इसी से हम इन्हें गुदड़ी के लाल कहते हैं। ये भारत के अंधियारे घर के उजाला हैं। देश के दुष्कर्मों से रूठी हुई लक्ष्मी और सरस्वती को मनाय लाय फिर से संस्थापित करने के द्वार हैं इसलिये इनका सब नाज़ नखरा सह लेना चाहिये। दुधार गाय के दो लात भी भले होते हैं।

मई १८६१

## (३२) कट्टर सूम की एक नक़ल

साह खेमकरन (पंखा हाँकते हाँकते) हाय ! हाय ! मारे गरमी के फुँके जाते हैं ( जीभ से होठ चाटते ) प्यास ऐसी लगी है कि हलक सूखा जाता है ( आकाश की ओर देख ) इतना दिन चढ़ आया दस बजते होंगे अबहिन तक पंडित जी नहीं आए घर से सन्देशा आया है कि आज बैशाख की पूनो है पितरान के नाम घट दान किए होइ है। भिखवा कहार को छदाम की ककरी लाने को चौक भेजा है वह भी न जानिए क्या करने लगा जो अब तक नहीं लौटा गृहस्थी महा जंजाल है, रोज उठकर एक न एक खर्च लगा ही रहता है, आज कुछ नहीं रहा यही जी की सांसत आ लगी दमड़ी का एक झञ्झर भँगाया है पाव सेर सत्तू आधा डब्बल दच्छिणा कहाँ तक पंडित जी को न देना पड़ैगा तौ भी हमें लोग सूम कहते हैं। अभी एक लड़की का ब्याह कर चुके हैं दूसरी मुँह लगे जूफती हैं कहाँ तक किफायत करैं। दो महीने से देखो धोती फटी है वही एक धोती में गुज़ारा करते हैं सिवाय सूखी रोटी के दमड़ो का घी जहर बराबर समझते हैं। तब तो निर्वाह होता है क्या करैं रोजगार सब मारा ही पड़ा है जब से नोट चलो हुंडी पुर्जा को कोई पूछता ही नहीं धूर की रस्सी बट काम चलाते हैं तिस पर भी नहीं जमा बढ़ुरती तो अब कहाँ तक कृपणता करैं।

( डाकखाने का एक चपरासी )

चप०—साह जी, तुम्हारे नाम की बैरङ्ग चिट्ठी है दो आना पैसा दो और चिट्ठी लो।

खेम०—( चिट्ठी कई बार उलट पुलट देख मोहर बचाय लिफाफा खोलने लगा )

चप०—हाँ ! हाँ ! यह क्या करते हो ? बिना महसूल दिये चिट्ठी मत खोलो।

खेम—हाँ ! हाँ ! सब्र करो, महसूल देंगे।

चप०—नहीं ! नहीं! ! बिना महसूल दिये चिट्ठा खोलने का हुकुम सरकार से नहीं है।

खेम०—ज़रा सी चिट्ठी का दो आना महसूल। हमने ऐसी अन्धेर कभी नहीं सुना, कुछ सोना चाँदी तो इसमें हो होगा नहीं, बिना सोचे समझे किसने यह नादानी का काम किया कि एक तो बैरंग चिट्ठी भेजा उसमें भी ऐसी भर कर दिया कि दो आना महसूल देना पड़ता है।

चप०—अच्छा तो न लो। लाइये, हम फेर देंगे।

खेम०—सुनो, हमारी तुम्हारी एतनी दिनों की जान पहचान क्यों जरा सी बात के लिये बे मुलाहिजे होते हो। खोलने दो, देखें इसमें क्या है ? जो कोई मतलब की होगी तो दो आने दें होंगे नहीं तो ऐसी हिक्मत से बन्द कर देंगे कि कोई न जान सकेगा।

चप०—न कोई जाने भगवान जो हमारे ईमान धर्म का साक्षी है वह तो जानता है।

खेम०—उः तुम भी उसको जानने के लिए बहुत सी बाते हैं वह सब बात कहाँ तक जान सकता है क्या यही बात उसको जानने के लिये है।

चप०—यह मत समझो कि वह कोई बात नहीं जानता तुम्हारे सिर में कितने बाल है यह भी वह गिने बैठा है। बिना उसकी मर्जी के पेड़ की एक पत्ती तो हिल सकती ही नहीं। फिर

और किसकी कहैं। शायद इसमें किसी ने तुम्हारी नाम की कोई हुंडी भेजा हो!

खेम०—भाई! ऐसा कहाँ हमारा भाग्य? जो किसी ने हुंडी भेजा होता तो क्या दो आने महसूल के देते उसे शरम आती थी।

चप०—शायद तुम्हारे लड़के की चिट्ठी हो। बहुत दिन उसे घर से गये बीत गया है।

खेम०—तो क्या वह यह नहीं जानता कि हमारे बाप के पास कहाँ से जमा आ गई। जो हम बैरंग चिटठी भेजते हैं यह तो कोई राजा बाबू से हो सकेगा कि दो आने चिट्ठी का महसूल दे हम कहाँ से पावें दो आने में हमारी दो दिन रोटी चलेगी तुम ले जाओ हम न लेंगे। (चिट्ठी लौटा देता है) (उसका लड़की विनता अचानक वहाँ आ जाती है और उसे लौटते देख खेम करन से—)

विनता—बाप—यह चिटठी वाला क्या लौटा जाता है! क्या वह चिटठी तुम्हारे नाम को नहीं है?

खेम०—है तो पर दो आने महसूल के कहाँ से आवें!

विन० (स्वगत) हाय ऐसा बाप! शत्रु को भी न मिले कदाचित यह चिट्ठी भैया के पास से न आई हो इसी के सूमपने से तंग आकर आह घर छोड़ कर चला गया पर हम कहाँ जाय (प्रकाश) बाप! तो महसूल हम दे देंगी।

(चिट्ठी वाले को फिर बुलाती है और उससे चिट्ठी ले अपने भाई का हस्ताक्षर पहचान) यह अक्षर तो भैया के हैं (बाप से) हा! धिक्कार है। केवल दो आना खर्च हो जाने के कारण अपने निज लड़के की चिट्ठी जिसका दस वर्ष से कुछ पता नहीं है कि कहाँ चला गया बाप! तुम फेर देते हो

( चपरासी से ) तुम हमारा विश्वास करो कल हम पैसा कहीं से कर रखेंगी तुम आकर ले जाना।

चप०—इसकी कुछ चिन्ता नहीं है पर इतना कहे देता हूँ कि फिर न फेरूँगा तुम्हारे विश्वास पर चिट्ठी छोड़े जाता हूँ नहीं यह डोकरा बड़ा कज़ाक है मैं कभी न मानता ( जाता है )

खेम०—भला, तू पैसा कहाँ से पावेगी जो देगी महसूल। ऐसी फजूल खर्ची में हमारा निबाह काहे को होगा।

विन—मैं पिसौनी कर पैसा दे दूँगी दो आना कौन बड़ी बात है तुम खातिर जमा रखो तुम्हें न देना पड़ैगा।

खेम०—बेटी यह आदत अच्छी नहीं है जो पैसा तुम मेहनत कर कमाओ वह हमें दे डाला करो तुम अभी जानती नहीं हो पैसा कैसी मेहनत से मिलता है दाँतों पसीना आ जाता है। खैर अबकी बार तो कुछ हुआ सो हुआ आइन्दा से चौकसी रक्खो कि ऐसी फिजूल खर्चियाँ न करा करो बेटी मैं तुम्हारे ही फायदे के लिये कहता हूँ इन्हीं बातों से में तुम्हारे भाई से नाराज़ रहता था लो तुमने भी उसी राह पर कदम रखना शुरू किया अच्छा तो पढ़ो इस चिट्ठी को।

वि० ( लिफाफा खोल पढ़ने लगी ) प्यारी बहिन! तुम्हें याद होगी कि दस वर्ष के लगभग हुए जिस समय मैं अपने बाप के सूमपने और किफायती मिजाज से तङ्ग आकर घर छोड़ा था तब मैं यहाँ तक लाचार हो गया था कि कि मेरे तन में कपड़ा और पाँव में जूती तक नहीं था और भीख माँगते-माँगते यहाँ बम्बई तक किसी तरह पहुँचा (विनता आँखों में आँसू भर सिसकती हुई आँसू पोछते पोछते स्वगत ) हाय! ऐसे बाप से तो बे बाप का होना अच्छा जिसको अपने पेट के लड़के से भी रुपया अधिक प्यारा है।

खेम०—हाँ आगू पढ़ो।

वि०—मैंने तो यहां समझा था कि सारा संसार मेरे बाप ही का सा है पर यह बात देखने में न आई बहुत से कितने निष्कारण मित्र और दयाशील पड़े हैं। पहिलो हो मंजिल में आकर एक जमीदार के द्वारे पर टिक रहा जिसने मुझे अतिथि जान मेरो ऐसा खातिर किया कि मुझे ऐसा अच्छा भोजन कभी बाप के घर नहीं मिला था।

खेम (स्वगत) अच्छा हुआ जो मैंने दो आने पैसे व्यर्थ नहीं गवाया।

बहन! इस चिट्ठी से तुम यह मत समझो कि मुझे बाप से प्रेम और उनमें भक्ति नहीं है किन्तु ऐसी-ऐसा कड़ी बातें इसलिये लिखता हूँ कि इसे बाँच या सुन उनके जी पर कुछ तो असर होगा जिससे उनका कठोर हृदय कोमलता ग्रहण करे और यह ख्याल जो उनके जी में समाना है कि संसार में जो कुछ सो रुपया है,

"भर जैहों तोहि न भुजैहों"

इसे अलग करें। और, दूसरे दिन वहाँ से चल दिया राह में कोई दिन मुझे दिन और रात चलते ही बीतता था जङ्गल पहाड़ नाँघता डाँकता जब बहुत थक जाता था तब किसी पेड़ के नीचे सो रहता था। कभी मारे भूख के पेटाग्नि जब नहीं सहार सकता था तब चोरी करने का जी चाहता था अन्त को किसी तरह लुढ़कते पुढ़कते यहाँ तक पहुँचा। कई दिनों तक यहाँ मैं धनियों के कई एक सदाबर्त हैं उनमें से अन्न माँग लाता था और रुखे सूखे अन्न से किसी तरह पेट भर रात को कहीं पड़ रहता था (विनता आँख में आँसू भर स्वगत) हाय जिसके घर में भगवान का दिया सब कुछ है उसकी ऐसी दशा हो।

खेम० (क्रोध से) बैठे बैठाए बलबाई सुझी हराम का खाना और गुर्राना। भला! मालुम तो पड़ा कि कैसी मशक्कत से





खाने को मिलता है। बचा ने समझा था कि घर के बाहर चले जाने से कहीं खजाना रखा है खोद लावेंगे। विनता, यह पत्र तुम्हारे लिए एक शिक्षा है जो सम्हल कर न चलेगा उसकी यही दशा होगी। अच्छा, आगे पढ़ो।

बिन०—बस, बस, बाप अब मुझसे नहीं पढ़ा जाता। क्या इससे तुम्हारे कठोर चित्त पर कुछ असर न हुआ?

खेम०—असर कैसा! यह उसी का फल है जो वे हने-घुने का खाने को मिलता था तो भी दूध-भात की परोसी थाली में लात मारा।

बिन०—बाप धिक्कार है! ऐसे खाने को कि लहू पानी कर खाने को देते हो। कब तुमने उसे जूड़े जी खाने को दिया था। बिना फटकार किए न तुमने उसे कभी पेट भर खाने को दिया न कपड़ा। न ठंडे पेट कभी उससे मुँह भर बोले। (स्वगत) न जाने यह सब जमा किसके काम आवेगी। ऐसे बाप भए तो क्या न भए तो क्या?

खेम०—बेटी, तुम समझती नहीं हो। लड़कई ही से बहुत खरच पात की बान जिसकी पड़ जाती है तो आगे चल कर भी उसकी वैसी ही आदत पड़ी रहती है तब वह आदमी आवारा हो जाता है। इससे बहुत खर्च करने की बान रखना अच्छा नहीं होता। सदा दबे हाथ खर्च किया करे। चार पैसे की जगह एक पैसा खर्च करे जो काम एक पैसा में होता हो उसे जहाँ तक हो सके तहाँ तक छदाम मे करे। गेहूँ की रोटी उर्द की दाल ठुकरा भर घी छोड़ कर क्या कोई मोती चुगता है। अब कैसे खान को दिए होता है। हम कहाँ से पाते जो रोज उठ कर उसे दूध मलाई खिलाया करते, तुम देखती हो हम कैसे गरीब हैं, बनिज ब्योपार कुछ करते नहीं न हम से किसी तरह का कामकाज

हो सके क्योंकि हम जौन ही काम करना विचारते हैं उसी में पहले कुछ खर्च देखते हैं। पीछे चाहे नफा भी हो।

विनता०—हाँ, हाँ, हम जानती हैं जैसे गरीब तुम हो। बाप ! तुम जी के दरिद्र अलबत्ता हो। हम दोनों बड़े प्रसन्न होते जो तुम गरीब रहते फिर हम लोंग काहे को गिल्ला करते। तन मन से तुम्हारी रखवाली और पालन-पोषण करते। बाप ! निश्चय जानों तुम्हीं ने हमारे भाई को ऐसा दबासा कि वह तुम्हारे कुलच्छन से घर में न रहा।

खेम०—बड़ी बज्जात लड़की है। बाँच बाँच चिट्ठी, न तू बाँचे चशमा ला दे हम बाँच लें।

विनता०—( फिर चिट्ठी बाँचने लगी ) प्यारी बहिन। कितने ऐसे अकारण मित्र दयावान मनुष्य पड़े हैं जिनसे यह बसुधा ठौर-ठौर अलंकृता है। एक दिन एक बुड्ढा मुझे मिला। वह सब मेरा हाल पूँछ उसे कुछ दया आई तो एक पारसो सेठ की कोठी में अपनी जमानत पर पन्द्रह रुपये महीने का मुझे नौकर रखवा दिया। उस समय मुझे ऐसा सुख हुआ मानों जैसे कोई अंधेरे में पड़ा टटोलता फिरता हो एक बारगी रोशनी मिल जाने से सब उसे सूझने लगे। छः ही महीने में मैं अपनी दियानतदारी और कारगुजारी से सेठ की कोठी का खास मुनीम कर दिया गया। अब मुझे तीस रुपया महीना मिलता है और यह दो सौ रुपये जो मैंने अपने मामूली खर्च से बचा रक्खा है हुण्डी करा तुम्हें भेजता हूँ इसमें से आधा बाप को देना आधा अपने पास रखना।

खेम०—( विस्मित हो ) क्या ! क्या ! फिर तो इसे पढ़। दो सौ रुपया भेजा है। नहीं तो जा उस कोठरी में मेरा चश्मा रक्खा है उठा ला हमी पढ़ें। दो सौ रुपये में आधा तो मेरा हई है। आधा अपना हिस्सा भी मेरे

नाहक़ का नाम रखता

फल है कि अब वह तीस

अच्छा, आगे पढ़ ।

विनता०—अपना

दम-पुचाड़े में आय दे

लोग बड़े अभागे हैं कि

सिधार गईं । माँ जो

छोह उन्हें न होती । खैर

और तह चिट्ठी उन्हें

खेम०—(स्वगत)

लाहिये । इसके हाथ में

रहेगी । मुझसे इसकी

तदबीर सोच कि किसी

आवे । अभी पुस्तक यह मे

जिस तरह इसे रखता

खर्च करेगी । जी मेरा

सूमड़े की यह एक

कल्पना न समझें वर

ऐसे कदर्य इस सं

लोक जो कुछ

## पर अन्तरराष्ट्रीय कांग्रेस

नयी दिल्ली, २४ फरवरी (वा.)। कृषि में प्लास्टिक के उपयोग पर ग्यारहवीं अन्तरराष्ट्रीय कांग्रेस यहां २६ फरवरी से दो मार्च तक होगी।

एशिया के किसी देश में पहली बार होने वाली इस कांग्रेस में २५ देशोंके लगभग ४५० प्रतिनिधियों के भाग लेने की आशा है। इन प्रतिनिधियों में अनुसंधानकर्ता, इंजीनियर, किसान, परामर्शदाता, नीति निर्धारक और विशेषज्ञ शामिल है।

और पाकिस्त

८ लोग मा

गोली बारुद

संगरूर जि

ने जोगिन्दर सि

इस हत्या का

बताया है।

एक अन्य व

रात जालंधर जि

मकान में लूटपा

ने एक व्यक्ति क

# वरिष्ठ डाक्टरों के

# इस्तीफे की चेतावनी

लखनऊ, २४ फरवरी (वा.)। उत्तर प्रदेश के स्वास्थ्य मंत्री मुख्तार अनीस के आश्वासन पर राज्य के मेडिकल कालेजों के लगभग १२५० ... अपने सामूहिक इस् ... वापस ले ... सन ... के

कालेजों के वरि

विचार करने के

समुचित आदेश

श्री अनीस ने

का रास्ता अपना

मामलों को हल

उन्होंने कहा

सामान्य स्थिति

हुए कहा कि ज

डाक्टरों को काले

रुाना चाहिये

स्वास्थ्य मंत्री

मेडिकल

थाओं

से मेगा

भारत के कई स्थानों पर हिमपात और रुक-रुककर वर्षा होने से इस क्षेत्र में सर्दी लौट आयी है। जम्मू एवं कश्मीर तथा हिमाचल प्रदेश में भारी हिमपात होने से तापमान में काफी कमी हो गयी है।

# ठिया समेत ८ लोग

उसकी पुत्री को घायल कर दिया। पुलिस ने कहा है कि इस वारदात का आतंकवादी अपराध से संबंध नहीं है।

आतंकवादी गिरोह की आपसी प्रतिद्वन्द्वता में कल रात आतंकवादियों ने ही एक आतंकवादी को गोली मारकर ढेर कर दिया।




गोलियों से क्षत विक्षत उसका शव कल रात अमृतसर जिले में पंजवार ग्राम से बरामद हुआ।

बटाला पुलिस जिला में कोटला सालिया ग्राम में कल रात मोटर साइकिलों पर सवार होकर आतंकवादी लखबिन्दर सिंह के घर पर पहुंचे और उन्हें गोली मारकर घायल कर दिया तथा उनकी माता चरण कौर की हत्या कर दी। ये आतंकवादी बाद में एक मोटर साइकिल छोड़कर फरार हो गये। चरण कौर का शव आज सवेरे बरामद हुआ।

सीमा सुरक्षा बल के एक गश्ती दल ने पाकिस्तान से आ रहे एक घुसपैठिये को गोली से उड़ा दिया और दो अन्य को बंदी बना लिया। यह घटना अमृतसर ज़िले के खेमकरण

क्षेत्र ... घुसपै... थी।

सी... अमृत... निक... आतं... आतंकवादी एक ... पाकिस्तान की सीमा में भाग गये।

सीमा सुरक्षा बल के जवानों ने उस... दो राइफल, दो पिस्तौलें, दो रिवाल्व... विभिन्न बोर के सैकड़ों कारतूस बराम... हैं।

## राष्ट्रपति दिल्ली लौटे

नयी दिल्ली, २४ फरवरी (वा.)। राष्ट्रपति रामास्वामी वेंकटरामन, महाराष्ट्र और आन्ध्रप्रदेश के पांच दिन के दौरे के बाद आज राजधानी लौट आये। राष्ट्रपति अपने इस दौरे में पुणे बंबई और हैदराबाद गये थे। श्री वेंकटरामन के साथ उनकी पत्नी भी थी।

## जयललिता ...

मद्रास, २४ फरवरी (वा.)। ... भारतीय अन्नाद्रमुक की महासचिव... जयललिता आज तड़के एक कार दु... घायल हो गयी। सुश्री जयललिता ... ब्यालीसवां जन्मदिवस है।

सुश्री जयललिता उस समय घा... गयी, जब मद्रास हवाई अड्डे के निकट... कार को एक लारी ने टक्कर मार दी...

पार्टी स्रोतों के अनुसार जयलल... मामूली चोट आयी है। उन्हें नगर के... अस्पताल में दाखिल कराया गया... जयललिता कल पांडिचेरी में चुनाव अ... पर गयी थी और आज तड़के मद्रास लौ...

अस्पताल के सूत्रों ने 'यूनीवार्ता' को... कि सुश्री जयललिता के माथे पर चो... है।, जबकि उनकी पारिवारिक मित्र... शशिकला और कार चालक भी ... घायल हुये हैं।

# की ६ सीटों पर कड़ा ...